भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) की केन्द्रीय कमेटी का मुखपत्र

फरवरी 2022

प्रतिरोध का स्वर

वर्ष 36
संख्या 2

मूल्य 5 रुपये

आगामी विधानसभा चुनावों में सीपीआई (एमएल)–न्यू डेमोक्रेसी का आवाहन

फासिस्ट आरएसएस-बीजेपी और उनके सहयोगियों को पराजित करें

जुझारू जन आंदोलन संगठित करने की मुहिम लें

पांच राज्यों में विधान सभा के चुनाव जिस दौर में हो रहे हैं, आम जनता तीव्र महंगाई, बेरोजगारी, महामारी की तबाही से त्रस्त है। उसकी आय लगातार घट रही है, गरीबी और अभाव में निरंतर बढ़ोतरी हो रही है। सरकार की अमीरों के पक्ष में नीतियों के कारण देश में असमानता की खाई निरंतर चौड़ी हो रही है।

यह वह दौर भी है जब तीन कृषि कानूनों के खिलाफ देश के किसानों ने दिल्ली की सीमाओं पर इतने लम्बे समय तक धरना दिया, सरकार द्वारा इन कानूनों की वापसी किसानों के इस बहादुराना संघर्ष की ऐतिहासिक जीत है। इसने आरएसएस–भाजपा के फासीवादी शासन को जबरदस्त झटका दिया है; फासीवादी सत्तानशीनों की अग्रगति को अवरुद्ध किया है। इस संघर्ष के जरिए देश में व्याप्त कृषि संकट एक बार फिर राष्ट्रीय स्तर पर मुखर हुआ है। उपज का न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) कानूनी अधिकार है, इस मांग को राष्टीय एजेंडा पर स्थापित किया है। इसने सत्ता के कॉरपोरेट–परस्त चरित्र को आम जनता के सामने उजागर किया है। किसानों की बदहाली, किसानी में बढ़ता घाटा और कर्ज, आत्महत्याएं जिसके शिकार विशेष रूप से गरीब किसान और खेतिहर मजदूर हैं, दवा–इलाज और शिक्षा जैसी बुनियादी जरूरतों से आम आवाम महरूम है। घटती आमदनी–बढ़ता कर्ज के ये हालात नेशनल सैंपल सर्वे ऑर्गेनाइजेशन (NSSO) के 77वें दौर (2018–19) से भी बखूबी जाहिर हैं। महामारी के दौरान हालात और भी बदतर हुए हैं।

यह किसान संघर्ष गैर–संसदीय जुझारू जनसंघर्षों के लिए एक मिसाल है। इसने जाहिर किया है कि फासिस्ट ताकतों को जन संघर्षों के बल पर हराया जा सकता है। शासक वर्ग और उनका प्रचारतंत्र (मीडिया) चुनावों को ही लोकतांत्रिक अभिव्यक्ति का एकमात्र माध्यम मानते हैं, इस किसान संघर्ष ने एक बार फिर जाहिर कर दिया कि फासीवादियों के आर्थिक हमलों का मुकाबला करने में जन संघर्षों की तुलना में निर्वाचन के लिए मतदान की भूमिका सीमित है। चुनाव जब फासीवादी शासन को झटका देते भी हैं तब भी फासीवादी ताकतों के समर्थक वर्गों के खिलाफ जनता को गोलबंद नहीं करते। शासक वर्ग चुनावों को अपने आप में एक मकसद बताते हैं जबकि जन संघर्ष ऐसे झटकों को फासीवादी ताकतों तथा उनके समर्थक शासक वर्गों को चुनौती देने की प्रक्रिया का हिस्सा मानते हैं। किसान संघर्ष का यह सबक पंजाब, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में गूंज रहा है। फासीवादी शासन को झकझोरने वाला यह आंदोलन साम्राज्यवाद और घरेलू प्रतिक्रियावादी ताकतों के खिलाफ संघर्षों की कड़ी में एक शानदार अध्याय है। शहंशाह (फासीवादी शासकों) के अश्व की लगाम थामने का साहस करके इस संघर्ष ने जनवादी संघर्षों के लिए नई गुंजाइशें विकसित की हैं, जिनके लिए परिस्थितियां माकूल हैं।

कोरोना महामारी के दौरान शासक वर्गों का जनविरोधी चरित्र उजागर हुआ है। शासक वर्गों के दल अत्यधिक धनियों (सुपर रिच) को और अधिक धनी बनाने में ही लगे रहे, आम जनता की सुरक्षा के लिए खर्च करने से वे इंकार करते रहे। नतीजतन, आम जनता को घनघोर दुश्वारियों का सामना करना पड़ा, अस्पतालों में जगह नहीं होने के कारण सड़कों पर लोगों ने जान गवांई, ऑक्सीजन न मिल पाने के कारण दम घुटने से मौत हुई, नदियां लाशों से पट गईं। आम जनता गरीबी और कर्ज की दलदल में धंसती चली गई, अनेकों ने अपने प्रियजनों को गंवा दिया। यह सब इसलिए हुआ क्योंकि सरकारों ने देश में अनेक बड़े–बड़े अस्पताल, प्रशिक्षित चिकत्सकों, प्रचुर मात्रा में ऑक्सीजन की उपलब्धता के बावजूद वांछित भूमिका अदा नहीं की। अस्पतालों में जगह और कर्मचारियों की कमी थी जबकि शमशान घाट अटे हुए थे। कॉरपोरेट नियंत्रित मीडिया की मदद से शासक वर्ग की पार्टियों ने बीमारी से रोकथाम के नाम पर आम जन को पुलिस के हवाले कर दिया। महामारी की तबाही के बावजूद जेलें भरी रहीं, यहां तक राजनीतिक बंदियों और जिनके खिलाफ ऐसे आरोप थे जिनमें हल्की सजा के प्रावधान थे, जमानत पर रिहा तक नहीं किया गया। सरकार ने अपराधियों की तरह आचरण किया। महामारी तेजी से फैल रही थी इसके बावजूद केंन्द्र सरकार ने स्वास्थ्य बजट घटा दिया।

2020–21 के दौरान व्यय के संशोधित अनुमानों की तुलना में 2021–22 के केंद्रीय बजट में स्वास्थ्य के लिए आवंटन में 10 प्रतिशत कटौती की गई थी। इसी तरह से केन्द्र के बजट में शिक्षा पर 6 प्रतिशत कटौती और सामाजिक कल्याण योजनाओं के लिए केन्द्र का बजट 1.5 प्रतिशत से घटाकर 0.6 प्रतिशत कर दिया गया। राज्य सरकारों के संसाधनों में कमी के कारण सामाजिक क्षेत्र पर होने वाले खर्च पर इसका असर और भी अधिक हुआ है। भारतीय संविधान में सामाजिक कल्याण योजनाओं का काम मुख्य रूप राज्य सरकार के कार्यभार के अंतर्गत आता है। इस प्रकार केन्द्र का यह काम संघीय ढांचे को कमजोर करता है। दूसरी ओर कंपनियों के प्रति सरकार काफी उदार रही है। कॉरपोरेट टैक्स में भारी कमी की गई है। संपत्ति कर तो 2016 में ही समाप्त कर दिया गया था। जबकि अप्रत्यक्ष कर काफी अधिक बढ़ाए गए हैं। कोरोना के पहले के मुकाबले पेट्रोल और डीजल पर टैक्स तुलनात्मक रूप से 79 प्रतिशत बढ़ा है।

असमानता जिस गति से बढ़ी है, सरकार की नीतियों का नतीजा है। अरबपतियों (जिनकी संपत्ति 7500 करोड़ रुपये से ऊपर है) की संख्या और संपत्ति में काफी बढ़ोतरी हुई है। सबसे अमीर 98 भारतीयों के पास देश के 55.2 करोड़ सबसे गरीबों से अधिक संपत्ति है। 84 प्रतिशत जनता की आय में गिरावट आई है। दुनिया में गरीबों की संख्या में सबसे ज्यादा बढ़ोतरी भारत में हुई है। दुनिया में गरीबों की संख्या में जितने लोग बढ़े हैं उनमें आधे से ज्यादा भारतीय हैं। जिनकी आय सबसे कम है उस वर्ग को सबसे अधिक झेलना पड़ रहा है। सर्वाधिक गरीबों की आमदनी आधे से अधिक घट गई है। मौजूदा सरकार की नीतियां पहले की सरकारों के मुकाबले अधिक अमीर परस्त हैं।

शासक वर्ग दशकों में लूट करके जितना हासिल कर पाते, महामारी के दो साल के भीतर उन्होंने उतना बटोर लिया। बेरोजगारी तेजी से बढ़ी है। शहरी बेरोजगारी 15 फीसद से अधिक, ग्रामीण बेरोजगारी और अल्प–रोजगारी का स्तर पहले किसी भी समय से ज्यादा है। बेरोजगारी आज बहुत बड़ा मुद्दा है। नौजवान इसे लेकर आंदोलित हैं। जितनी भारी तादाद में नौकरियों के लिए आवेदन आ रहे हैं उससे पता लगता है बेरोजगारी का आलम क्या है। इस बेरोजगारी की वजह क्या है? कृषि संकट का समाधान करने और भूमि सुधारों को लागू करने में नाकामयाबी, अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों पर साम्राज्यवादी पूंजी की बढ़ती जकड़। ये बेरोजगारी की मूल वजह हैं। इन नीतियों ने श्रमिकों के बड़े वर्ग को बेरोजगार कर दिया गया है, न्यूनतम मजदूरी में 2020 के बाद से कोई बढ़ोतरी नहीं हुई है। किसानों का संकट जग जाहिर है। खुदरा व्यापार चौपट हो गया है। यह सब उस विकलांग अर्थव्यवस्था का नतीजा है, जिसमें लग्जरी मोटर गाड़ियां, महंगे अपार्टमेंट और सोने की बिक्री अपने उच्चतम स्तर पर है, जबकि बुनियादी जरूरतें मध्यम वर्ग सहित आम लोगों की पहुंच से बाहर होती जा रही हैं।

मुनाफे की लूट और धन–दौलत समेटने की राह में गठबंधन सरकारों की विवशताओं से छुटकारा पाने की गरज से शासक वर्गों के आक्रामक समूह ने आरएसएस–भाजपा नीत भारी बहुमत की सरकार को सत्ता पर ला बैठाया। मजदूरों, किसानों, आदिवासियों और दलितों, आम जनता के संघर्षों को निशाना बनाने के मकसद से सांप्रदायिक फासीवादी लामबंदी और छद्म राष्ट्रवाद के जरिए गुमराह किया जा रहा है। कट्टरवाद को प्रोत्साहित किया गया, अल्पसंख्यकों, विशेषकर मुसलमानों को, निशाना बनाकर सांप्रदायिक विभाजन तेज किया गया। छद्म राष्ट्रवाद का मुखौटा लगाकर कारपोरेट परस्त नीतियां अपनाई गईं। उपनिवेशवाद–विरोधी संघर्ष और 1947 में सत्ता हस्तांतरण के बाद दशकों संघर्षों के बल पर आम जनता ने जिन अधिकारों को हासिल किया था, उन्हें छीनने के मकसद से शासक वर्गों के प्रमुख वर्ग द्वारा फासीवाद का सहारा लिया गया है।

उपनिवेशवाद–विरोधी संघर्षों के दौरान, जनता के पक्षधर कुछ सिद्धांत स्पष्ट हो गए थे, इनके आधार पर ही आमजन को आंदोलित व संगठित किया जा सका था। ये सिद्धात थे, साम्राज्यवाद विरोध, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, सामाजिक न्याय और संघवाद (फेडरेलिज्म)। कुलीन वर्ग यानी बड़े पूंजीपति और बड़े जमींदार, जिन्हें सत्ता हस्तांतरित की गई थी, हमेशा इन उसूलों प्रति उदासीन रहे हैं। सैद्धांतिक रूप से बातें बघारने और दिखावे के तौर पर जरूर वे इनको रटते रहे लेकिन व्यावहारिक रूप से इन पर अमल करने से कतराते रहे हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (RSS), जो कि एक फासिस्ट संगठन है, शुरूआत से इन सिद्धांतों का विरोधी रहा रहा है। चुनावी राजनीति की मजबूरियों में वह इनसे खुलकर इनकार नहीं कर पाता परंतु वह इनकी व्याख्या इन सिद्धांतों के विपरीत करता है।

आरएसएस–भाजपा 2019 में फिर सत्ता पर काबिज हुई। शासक वर्गों की अनेक क्षेत्रीय पार्टियों व राज्य मशीनरी के हिस्सों हिस्सों द्वारा इनके सामने समर्पण से वे योजनाबद्ध तरीके से इन सिद्धांतों को खोखला करने में जुटे हैं। देश पर अपनी फासिस्ट सत्ता थोपने के मकसद से वे

(शेष पृष्ठ 2 पर)

आगामी विधानसभा चुनावों में सीपीआई (एमएल)–न्यू डेमोक्रेसी का आवाह्न

(पृष्ठ 1 से आगे)

शक्तियों को केंद्रीकृत करने की दिशा में बढ़ रहे हैं और संघीय व्यवस्था पर आघात कर रहे हैं। वे धर्मनिरपेक्षता के सदा खिलाफ रहे हैं। अपने फासिस्ट मंसूबों के खातिर उन्होंने सीएए–एनआरसी–एनपीआर के माध्यम से सांप्रदायिक साजिशों का विस्तार किया और लोकतांत्रिक विरोध और असंतोष को क्रूरता से कुचला। वे उत्पीड़ित जातियों (दलितों और ओबीसी) के रहनुमाओं के प्रति जुबानी लफ्फाजी बघारते हुए उन्हें उनके अधिकारों से महरूम कर रहे हैं। सोशल इंजीनियरिंग के नाम पर उत्पीड़ित जातियों को विभाजित करके उन्हें सवर्ण जातिवाद की जद में समेट रहे हैं। इससे इन वंचित तबकों को कोई लाभ मिलने वाला नहीं है, यह उनकी एकता को कमजोर करने के लिए है।

आदिवासियों के खिलाफ इन्होंने बाकायदा जंग शुरू की हुई है। कॉरपोरेटों के स्वार्थ में इन्हें खनिज संसाधनों से भरपूर उनकी भूमि से बेदखल किया जा रहा है। उनका शासन महिलाओं के पूरी तरह से खिलाफ है, उन पर हमले हो रहे हैं। महिलाओं की नौकरी चली गई है, सामाजिक वर्जनाओं और अपवाद कानूनों से उन्हें प्रतिबंधित किया जा रहा है। साम्राज्यवाद के सम्मुख घुटने टेक कर वे अपने कट्टरवाद को पुष्ट करने के लिए पड़ोसी देशों, खासकर पाकिस्तान के खिलाफ उग्रराष्ट्रवाद का इस्तेमाल करते हैं। लोकतांत्रिक अधिकारों, लोकतांत्रिक तौर तरीकों यहां तक कि लोकतांत्रिक संस्थाओं पर जबदस्त आघात किया जा रहा है। लोकतंत्र की अवधारणा को केवल चुनावी कवायद तक सीमित कर दिया गया है तथा मीडिया, बाहुबल–धनबल और चुनाव आयोग के माध्यम से बड़े स्तर पर हेरफेर के जरिया बना दिया गया है। केंद्रीय एजेंसियों का चरम दुरुपयोग, सामाजिक कार्यकर्ताओं (ऐक्टिविस्टों) पर यूएपीए, राजद्रोह कानून और कानूनी प्रक्रियाओं की आवहेलना करके दमन, यहां तक कि पैगासस जैसे मोबाइल में खुफिया जासूसी (सैन्य ग्रेड स्पाइवेयर) हथकंडों का भी इस्तेमाल किया जा रहा है।

पांच राज्यों की विधानसभाओं के चुनाव का यह वह समय है, जब हाल ही में फासीवादी शासकों और कॉरपोरेट समर्थक नीतियों के खिलाफ जनसंघर्ष में बड़ी कामयाबी हासिल हुई है। इस संघर्ष की कामयाबी में प्रभावित जनता और क्रांतिकारी ताकतों की एकजुटता ने किसानों के आंदोलन के लिए नयी संभावनाओं के लिए मार्ग प्रशस्त किया है। क्रांतिकारी परिवर्तन की दिशा में आम जनता को लामबंद करने और संघर्षरत ताकतों का संयुक्त मोर्चा बनाने की दिशा में क्रांतिकारी ताकतें महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हैं। मौजूदा हालातों में दो संभावनाएं हैं– जनवादी ताकतें एकजुट होकर आगे बढ़ें अथवा प्रतिक्रियावादी फासिस्ट फिर ताकतवर होकर हमालवर होंगे। ऐसे में बेहद जरूरी है, फासिस्टों को अवसर नहीं दिया जाए, खासकर उत्तर प्रदेश में जो कि देश का सबसे अधिक आबादी वाले राज्य है, देश की राजसत्ता पर कौन काबिज होगा इसे तय करने में उत्तर प्रदेश बड़ी भूमिका अदा करता है और फासीवादी हिंदुत्व के प्रभावी होने में इसकी बड़ी भूमिका है।

देश में सभी जगह जनता समस्याओं से घिरी हुई है, जिन राज्यों में ये चुनाव हो रहे हैं, हरेक में खास राजनीतिक परिस्थितियां हैं। उत्तर प्रदेश मुख्यतया कृषि प्रधान और काफी पिछड़ा राज्य है। कोरोना की दूसरी लहर के दौरान यहां की सरकार का आचरण आपराधी जैसा रहा है। यहां के ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी और अत्यंत दमनकारी हालाात हैं। जहां पश्चिम उत्तर प्रदेश में किसानों ने बड़ी तादाद में एकजुट होकर आंदोलन में शिरकत की है, कृषि संकट से राज्य के सभी क्षेत्र ग्रसित हैं। कृषि संकट जातीय उत्पीड़न के साथ मिलकर प्रभावित कर रहा हैं। इन उत्पीड़ित कृषक जातियों में सीमांत किसान और छोटे किसान भारी तादाद में हैं। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में, गन्ने के बकाए का भुगतान न होना बड़ी समस्या है। चालू वर्ष के दौरान भुगतान का लगभग आधा (7000 करोड़ रुपये) अभी भी लंबित है, कुछ बकाया पिछले वर्ष से लंबित है। खुदरा व्यापार प्रभावित हुआ है और असंगठित वर्गों को सबसे ज्यादा नुकसान हुआ है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि विशेष रूप से पश्चिम उत्तर प्रदेश में किसानों की एकता ने आरएसएस–भाजपा के सांप्रदायिक दबाव को एक हद तक कम कर दिया है। वहां उनके समर्थन का आधार खिसक गया है। आरएसएस–भाजपा का साम्प्रदायिक गिरोह बेहद बेचैन है, उनके समर्थक मथुरा और काशी का मुद्दा उठा कर साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण की कोशिशे कर रहे हैं। यहां तक मुसलमानों के जनसंहार के लिए खुला आह्वान कर रहे हैं।

योगी आदित्यनाथ की सरगनाई में आरएसएस–भाजपा सरकार के तहत उत्तर प्रदेश अल्पसंख्यकों पर फासिस्ट दमन की प्रयोगशाला बना हुआ है। सीएए–एनआरसी–एनपीआर के विरोध में आंदोलित जनता पर दमन किया गया, लोगों की हत्या की गई, पुलिस ने अल्पसंख्यकों को निशाना बनाकर कहर बरपाया, सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाने के नाम पर उन पर आर्थिक जुरमाने थोपे गए। विरोध की अगुआई करने वालों को सार्वजनिक रूप से बदनाम किया गया। पुलिस का नग्न आतंक मुख्यमंत्री के "ठोको" आदेश से जाहिर है। इस तरह से यहां की सरकार ने न्यायिक प्रक्रिया को समाप्त कर पुलिस को दमन की खुली छूट दी है। इस नीति के जरिये माफियाओं को सत्तारूढ़ आरएसएस–भाजपा का संरक्षण लेने के लिए मजबूर किया गया। जनता के संघर्षों और विभिन्न वर्गों पर क्रूर दमन ढहाया गया। लड़कियों पर मनुवादी प्रतिबंध और कानून थोपे गए हैं। गोरक्षा के नाम पर ऐसा आलम बना दिया गया कि आवारा पशुओं द्वारा फसलों को नुकसान से किसान बदहवास और असहाय हैं।

जिन पांच राज्यों में चुनाव हो रहा है, पंजाब दूसरा बड़ा राज्य है। यहां के किसानों ने किसान आंदोलन में काफी आगे बढ़कर भाग लिया है। यहां कृषि संकट, बढ़ते कर्ज और शिक्षित बेरोजगारी की भीषण स्थिति के कारण व्यापक जनता आंदोलित है। कॉरपोरेट नियंत्रित मीडिया के एक वर्ग द्वारा किसान आंदोलन के दौरान उनके खिलाफ जिस तरह का घृणित निन्दा प्रचार किया गया और लांछन लगाए गए उससे पंजाब में आम जनता आरएसएस–भाजपा के खिलाफ आंदोलित है। राज्य में किसान आंदोलन की लहर के कारण भाजपा के पुराने सहयोगी, अकाली दल ने उससे किनारा कर लिया है। वहां भाजपा ने अपना अधिकांश जनाधार गंवा दिया है। कैप्टन अमरिंदर सिंह के साथ गठजोड़ करने के बाद भी यह सत्ता की दावेदारी करने की स्थिति में नहीं है। दिल्ली की सीमा पर किसानों के धरने के दौरान और चुनावों की घोषणा तक कोई भी दल चुनाव प्रचार में शामिल नहीं हो सका, यह आंदोलन का ही प्रभाव था। पंजाब की जनता ने राज्य के अधिकारों यानी संघीय व्यवस्था पर केन्द्र सरकार के आघात का भी प्रतिरोध किया है। इस आंदोलन को जनता का व्यापक समर्थन हसिल था। यह वजह है कि शासक वर्ग की पार्टियों से जुड़े किसान नेता किसान संयुक्त मोर्चे के नाम का इस्तेमाल करने की जुर्रत नहीं कर सके। पृथक मंच बनाकर ही चुनाव में भाग ले रहे हैं। यह आंदोलन गैर संसदीय जन आंदोलन था। सरकार ने किसानों से किए वायदे अभी भी पूरे नहीं किए हैं, आंदोलन खत्म नहीं हुआ है, ऐसे में चुनाव लड़ना आंदोलन के हित में नहीं है। विभिन्न राजनीतिक रुझानों और चुनाव में अलग–अलग रखने वाले दिशा रखने वाले किसान संगठनों ने केंद्र सरकार की कॉरपोरेट–समर्थक नीतियों के खिलाफ संघर्ष के मकसद से एक मोर्चा संयुक्त किसान मोर्चा बनाया था। इसके अलावा, पंजाब की जनता जिसमें यहां के किसान भी हैं, पंजाब की समस्याओं का समाधान तलाशने के लिए उत्सुक हैं।

उत्तराखंड के तराई क्षेत्रों में किसानों का आंदोलन मजबूत रहा है। बेरोजगारी की भीषण मार से प्रदेश की जनता बेहद पीड़ित है। आपदाओं जिनके लिए सरकारी संरक्षण प्राप्त रियल इस्टेट माफिया मुख्यतः जिम्मेदार है, में नुकसान से सरकार द्वारा राहत में कमी रहती है। इसके अलावा, मुख्य उत्पाद जैसे फल और सब्जियां, खास तौर पर आलू के दाम में गिरावट से किसानों की हालात बदतर हुई है। औद्योगिक इकाइयों में काम करने वाले मजदूरों को अधिकार हासिल नहीं हैं जैसा कि अन्य राज्यों में असंगठित श्रमिकों को अधिकार नहीं हैं।

गोवा मुख्यतया एक शहरी राज्य है। यहां आरएसएस–भाजपा द्वारा सांप्रदायिक ध्रुवीकरण की प्रतिक्रिया के अलावा प्रमुख मुद्दे बेरोजगारी और खनन से संबंधित हैं। यहा भ्रष्टाचार भी एक खास मुद्दा है।

मणिपुर की जनता उन समस्याओं से घिरी है, जिनका सामना अन्य राज्यों कि जनता कर रही है। साथ ही यहां मुख्य सवाल सुरक्षा बलों, खासकर अफस्पा (AFSPA) के तहत उत्पीड़न और दमन है। यहां अफस्पा को खत्म करने की मांग बहुत ही महत्वपूर्ण है। हाल ही में एक सैन्य टुकड़ी द्वारा पड़ोसी नागालैंड में खदान कर्मियों और नागरिकों की हत्या ने अफस्पा को निरस्त करने के सवाल को एजेंडे में ला दिया है।

इन सभी राज्यों में जनता के हालात बहुप्रचारित डबल इंजन सरकारों (राज्य और केंद्र में एक ही दल की सरकार) की नाकामयबी की नजीर है। इन डबल इंजन सरकारों में कुछ समानता है तो वह यह कि शासक वर्गों द्वारा जनता पर क्रूर दमन। शासक वर्ग के अन्य विपक्षी दल नीतियों में उनमें अंतर नहीं है, खासकर आर्थिक नीतियां सभी की एक जैसी हैं। आरएसएस–भाजपा की खासियत यह है कि वह जनविरोधी नीतियों को लागू करने के मामले में सबसे अव्वल है। मौजूदा समय में शासक वर्ग की यही एक पार्टी है जिसमें वह क्षमता है कि देश पर फासीवादी शासन थोप सकती है।

यह चुनौती भरा समय है। फासीवादी शासक जनता पर अप्रत्यक्ष कर लादकर लहू निचोड़ रहे हैं। टैक्सों की बदौलत आवश्यक वस्तुओं की महंगाई बेलगाम है। किसान, श्रमिक, आदिवासी और मुख्यधारा से किनारे धकेले गए सभी वंचित वर्गों पर हमला है। मौजूदा रोजगार और आमदनी घट रही है। कुल मिला कर जनता के लिए हालात बद से बदतर हो रहे है। तब, गौरवशाली किसान आंदोलन ने एक बार फिर जन आंदोलन और इसके साथ क्रांतिकारी आंदोलन को मजबूत करने का भी मार्ग प्रशस्त किया है। सरकार ने मजबूर होकर अभी तीन काले कानूनों को निरस्त कर दिया है और सभी किसानों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य सुनिश्चित करने के लिए संयुक्त किसान मोर्चे के प्रतिनिधियों सहित एक समिति गठित करने की घोषणा भी की है। फिर भी, वह फिर मौका तलाश रही है कि वह वायदों से मुकर जाए। केंद्रीय गृह मंत्री अजय मिश्रा की भूमिका की देशव्यापी निंदा के बाद भी, उन्हें अभी तक पद से हटाया नहीं गया। अब तक एमएसपी के लिए कमेटी का गठन भी नहीं हुआ है। इसलिए मौजूदा आंदोलन के दौरान हासिल किसान एकता को बरकरार रखना बेहद जरूरी है। इस एकता को कमजोर करने वाली या जुझारू जन आंदोलन की लाइन के नाम पर इस एकता को कमजोर करने वाले भटकावों से परहेज करना होगा।

मौजूदा ठोस परिस्थितियों में, भाकपा (माले)–न्यू डेमोक्रेसी ने इन विधानसभा चुनावों में कोई उम्मीदवार नहीं उतारने का फैसला किया है क्योंकि किसान आंदोलन के कई मुद्दे अभी भी लंबित हैं।

हर राज्य की परिस्थितियां अलग हैं। सीपीआई (एमएल)–न्यू डेमोक्रेसी आसन्न चुनावों, खासतौर से उत्तर प्रदेश और साथ ही उत्तराखंड में सत्तारूढ़ फासीवादी ताकतों को एक और झटका देने व आरएसएस–भाजपा और उसके सहयोगियों को हराने का आह्वान करती है।

पंजाब में भाजपा और उसके सहयोगी सत्ता के मुख्य दावेदार नहीं हैं, भाकपा (माले)–न्यू डेमोक्रेसी जनता के बुनियादी मुद्दों और उनके समाधान के विषय पर मुहिम चलायेगी।

भाकपा (माले)–न्यू डेमोक्रेसी ने तय किया है कि वह जनता के मुद्दों को मुखर करने के लिए अभियान संचालित करेगी और इन राज्यों में जुझारू जन आंदोलनों संगठित करने पर केंद्रित करेगी।

25.1.2022

केंद्रीय बजट 2022-23 : कारपोरेट की सेवा की और ऊंचाई

वित्त मंत्री द्वारा संसद में पेश किया गया केंद्रीय बजट देश की आम जनता की समस्याओं की पूर्ण अवहेलना और विदेशी व घरेलू कारपोरेट और प्रतिक्रियावादियों के हितों की सेवा करने के लिए एकतरफा प्रयास करता हुआ दिखाई देता है। ऐसा लगता है कि केंद्र सरकार शासक वर्गों और उनके साम्राज्यवादी आकाओं को यह दिखाने के लिए उत्सुक है कि 3 कृषि कानूनों को निरस्त करने के लिए किसानों के संघर्ष ने उन्हें मजबूर किया, लेकिन आर.एस.एस.–भाजपा की केन्द्र सरकार उनके हितों की सेवा और रक्षा करने के लिए प्रतिबद्धता में किसी भी तरह से कमजोर नहीं पड़ी है।

केंद्रीय बजट 2022–23 ने देश की जनता के किसी भी तबके को कोई राहत नहीं दी है। कृषि संकट जिसने किसानों को एक साल तक विरोध करने के लिए मजबूर किया था और उनके विरोध ने सरकार को मजबूर किया था कि वह 3 कृषि कानूनों को निरस्त करे, उनसे उपजे सवालों को भी बजट में संबोधित नहीं किया गया है। यहां तक कि एमएसपी के मुद्दे पर, जिसे सरकार सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध जताई है, सभी किसानों को एमएसपी देने का भी उल्लेख तक नहीं किया गया है, जबकि एमएसपी खरीद पर पिछले वर्ष की तुलना में कटौती कर केवल 2.37 लाख करोड़ रुपए के बजट आबंटन की ही घोषणा की गई है। बजट में सिंचाई को लेकर कोई घोषणा नहीं की गई है। तिलहन उत्पादन और बाजरे की खेती को बढ़ावा देने की बातें बहुत की गई हैं, लेकिन उस पर कोई ठोस कार्रवाई नहीं की गई। इसके अलावा तिलहन का घरेलू उत्पादन पिछले कुछ वर्षों में स्थिर रहा है। छोटे किसानों का नाम लेते हुए कुछ उपायों की घोषणा की गई है जैसे कृषि मशीनरी को किराए पर उपलब्ध कराना, लेकिन इसमें कुछ खास तत्व नहीं है और यह केवल कृषि के वास्तविक संकट को भ्रमित करने का प्रयास भर है।

वास्तव में आवास निर्माण और जलापूर्ति के लिए नल का कनेक्शन और ग्रामीण विकास योजनाओं का कुछ असर ग्रामीण क्षेत्राों पर भी पड़ेगा, लेकिन सरकार ने ग्रामीण जनता के मुद्दों को संबोधित करने की जरूरत को देखने से भी इंकार कर दिया है, जबकि भारत की दो तिहाई आबादी इन क्षेत्रों में रहती है। बजट से लोगों को उम्मीद थी कि किसानों की चिंताओं को दूर करने के लिए कुछ कदम उठाए जाएंगे। दिल्ली की सीमाओं पर पूरे 1 वर्ष तक गंभीर संकटों और सरकारी प्रोपेगेंडा द्वारा किसानों को बदनाम करने और उनसे बातचीत करने से भी सरकार के इंकार के बावजूद किसान संघर्ष करते रहे। फिर भी बजट में सरकार ने किसानों की चिंताओं को दूर करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया।

ग्रामीण भारत और किसानों द्वारा कृषि कानूनों के नाम पर किए गए कथित सुधारों को खारिज कर देने की सजा के रूप में उन्हें बजट में उपेक्षित किया गया है। ग्रामीण विकास के लिए आबंटन को संशोधित अनुमान (आरई) में 206948 करोड़ रुपए से 655 करोड़ रुपए घटा दिया 206293 करोड़ रुपए कर दिया गया है। इस साल के बजट में मनरेगा के लिए पहले से कम कर दिया गया है। आरई में 98000 करोड़ रुपए के मुकाबले इस बजट में 73000 करोड़ रुपया का प्रावधान किया गया है। यहां तक कि कृषि मंत्रालय के लिए भी आबंटन लगभग समान रखा गया है, अर्थात आरई में 147000 करोड़ रुपए की तरह इस बजट में भी 151000 करोड़ ही रखा गया है। इस बजट में उर्वरक के लिए सब्सिडी कम कर दी गई है। उसमें 140122 करोड़ रुपए के एवज में इस बजट में 105222 करोड़ रुपए ही आबंटित किए गए हैं, जिसका साफ अर्थ है कि उर्वरक आने वाले दिनों में और महंगा होगा, जो किसानों की पहुंच से बाहर हो जाएगा और कृषि लागत को भी बढ़ा देगा। साथ ही फसल बीमा के लिए आबंटित राशि को 15ए989 करोड़ से घटाकर 15,500 करोड़ रुपये कर दिया गया है।

सरकार ने पहले कारपोरेट के लिए कच्चे माल के स्रोत को विकसित करने के उद्देश्य से 'एक जिला एक उत्पाद' पर जोर देने की घोषणा की थी। इस बजट में भी वित्त मंत्री ने घोषणा की है कि 'एक रेलवे स्टेशन एक उत्पाद' के आधार पर रियायत दी जाएगी। इससे कारपोरेट के विभिन्न क्षेत्रों के लिए 'कैप्टिव' उत्पादन का मार्ग प्रशस्त होगा।

सरकारों ने अब बजट की कवायद को काफी सीमित दायरे में कर दिया है ताकि वर्ष भर करों में वृद्धि की जा सके और तथ्यों व आंकड़ों की बाजीगरी की जा सके। संक्षेप में कहें तो यह पूरी कवायद बेमानी है, जिसमें वस्तुओं की कीमतें वर्ष भर बढ़ती हैं। उसमें भी इस वर्ष के बजट में इस कवायद को मूर्खतापूर्ण और हास्यास्पद सीमा तक ले गये हैं। फिर भी सरकार द्वारा उठाए गए कदमों और उसकी मंशा को समझा जा सकता है। कारपोरेट क्षेत्र पर सरकार द्वारा एक के बाद एक उदारता भरे फैसलों की बौछारें की जा रही हैं। पूरी सरकार प्राइवेट पब्लिक पार्टनरशिप (पीपीपी) मोड अर्थात सार्वजनिक क्षेत्र के धन तथा निजी क्षेत्र द्वारा लाभ कमाने पर चली गई है।

पिछले वर्ष कारपोरेट टैक्स में भारी कटौती की गई थी। 5 वर्ष पूर्व इसी सरकार ने संपत्ति कर को समाप्त कर दिया था। इस वर्ष कारपोरेट पर सरचार्ज 12 प्रतिशत से घटाकर 7 प्रतिशत कर दिया गया है। स्टार्टअप के लिए कर छूट को और बढ़ाया गया है। बजट में सरकार ने आम लोगों और सरकारी कर्मचारियों को कोई राहत नहीं दी है। राज्य सरकार के कर्मचारियों के लिए मानक कटौती केन्द्र सरकार के कर्मचारियों के समकक्ष करने के अलावा केंद्र व राज्यों के कर्मचारियों को अधिक आयकर देना होगा।

देश के लोगों को अप्रत्यक्ष करों में तेज वृद्धि से निचोड़ा गया है और वित्त मंत्री ने इस सफलता के लिए खुद अपनी सराहना की है। लेकिन आम लोगों पर इस भारी बोझ से कोई राहत नहीं दी गई है। वास्तव में यह केंद्र और राज्य सरकारों का मुख्य कर राजस्व संग्रह है। इसलिए साल में ईंधन पर टैक्स में 79 प्रतिशत की बढ़ोतरी की गई है। सरकार ने लोगों पर बोझ को छुपाने के लिए 'रिफाइंड कोर मुद्रास्फीति' का सहारा लेकर आवश्यक वस्तुओं की कीमतों में तेज वृद्धि को ढ़कने की कोशिश की है। अप्रत्यक्ष कर मूल्य वृद्धि का एक प्रमुख कारण हैं।

कोरोना महामारी के दौरान देश के लोगों को भारी तकलीफें उठाना पड़ा है। लोगों को जीवन और नौकरियों से हाथ धोना पड़ा फिर भी स्वास्थ्य सेवाओं पर बजट में कोई वृद्धि नहीं की गई है। पिछले वर्ष केंद्रीय स्वास्थ्य बजट में 10 प्रतिशत की कमी की गई थी और इस बार भी लगभग उतना ही आबंटन बना हुआ है, जो मुद्रास्फीति के हिसाब से वास्तविक रूप से कमी को दर्शाता है। आरई के हिसाब से स्वास्थ्य बजट 85915 करोड़ रुपए था और इस वर्ष बजट में 86606 करोड रुपए का आबंटन किया गया है। यह एक अपराध है, क्योंकि महामारी से निपटने में पूरी स्वास्थ्य व्यवस्था की पोल खुल गई और आम लोग मौत व लाचारी का सामना कर रहे थे। बजट में महामारी से उत्पन्न मानसिक अस्वस्थता या कुछ उपकरणों पर सीमा शुल्क पर पहले की छूट को छोड़कर भारत में स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं से संबंधित प्रमुख मुद्दों पर पूरी तरह चुप्पी है। यहां यह महत्वपूर्ण है कि भारत के लोगों के लिए जो दुनिया के सबसे गरीब लोगों में से हैं और महामारी के दौरान और भी गरीब हो गए हैं अमीरों के एक छोटे से वर्ग को छोड़कर। स्वास्थ्य देखभाल पर अपनी जेब से खर्च (ओओपीई–स्वास्थ्य सेवा पर खुद मरीज द्वारा किया गया खर्च) का आंकड़ा लगभग 62.67 प्रतिशत है, जबकि दुनिया में औसत 18.12 प्रतिशत है जो बड़ी संख्या में लोगों को गरीबी में धकेल रहा है। बजट में स्वास्थ्य क्षेत्र के आबंटन में प्रमुख जोर टेलीमेडिसिन और डिजिटल स्वास्थ्य पर है।

शिक्षा पर भी आबंटन बेहतर नहीं रहा है और पूरा जोर दूरस्थ शिक्षा (डिस्टेंस लर्निंग) पर है जो वास्तव में अधिकांश लोगों को शिक्षा से दूर कर देता है। वित्त मंत्री ने ई–विद्या (200 टीवी चैनलों को आउटसोर्स) करने पर जोर दिया है। शिक्षा पर भी आबंटन लगभग स्थिर रहा है, यानी इस साल के बजट में 104278 करोड रुपए है जबकि पिछले वर्ष का बजट आबंटन 93224 करोड़ रुपए था। यह आबंटन इस तथ्य की रोशनी में तब किया गया है, जबकि वित्त मंत्री ने स्वीकार किया कि 2 साल की औपचारिक शिक्षा का नुकसान हुआ है। शिक्षा पर आबंटन को इस रूप में भी समझना चाहिए कि अन्य क्षेत्रों की तरह आबंटित धनराशि पूरी तरह खर्च होने की गारंटी नहीं है। शासक वर्ग की पार्टियां अपने शिक्षा मॉडल को लेकर झगड़ती रही हैं वहीं उन सभी के द्वारा अपनाए गए मॉडलों का उद्देश्य समाज के गरीब वर्ग को शिक्षा से दुर करना है। वस्तुतः गरीबों के बच्चों को औपचारिक शिक्षा से ही बाहर किया जा रहा है।

बजट में सरकार द्वारा की गई कटौती ने शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले सभी गरीबों को प्रभावित किया है। वास्तव में महामारी ने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में गरीबी के स्तर के बीच के अंतर को कम कर दिया है, जिसमें शहरी गरीब सबसे ज्यादा प्रभावित हुए हैं। खाद्य सब्सिडी की व्यापक कटौती में इस बात की बेरहम अवहेलना देखी जा सकती है। खाद्य सब्सिडी की राशि वर्ष 2020–21 में 541330 करोड़ (वास्तविक) और 2021–22 आरई में 286489 करोड़ रुपए थी लेकिन इस बार बजट का आबंटन मात्र 206831 करोड़ रुपए है। इसका साफ मतलब है कि कई योजनाओं को बंद कर दिया जाएगा। वह भी तब जबकि ग्लोबल हंगर इंडेक्स (विश्व भूख सूचकांक) में भारत 116 देशों में 104 वें स्थान पर है। सरकार का गरीब–विरोध मिड–डे मील योजना में कटौती से भी स्पष्ट है। इस योजना के लिए राशि 11,500 करोड़ रुपये से काटकर 10,233 करोड़ रुपये कर दी गई है। महामारी के दौरान दुनिया भर में पूरी तरह से गरीब लोगों में जुड़े लगभग आधे लोग भारत में हैं, यानी दुनिया की आबादी में हमारे हिस्से में गरीब कहीं और अधिक बढ़ गए हैं।

केन्द्र सरकार ने औद्योगिक विकास के संबंध में केवल विफल नीतियों को दोहराया है। सबसे पहले हमारे सकल घरेलू उत्पाद में विनिर्माण के योगदान में उत्तरोत्तर सरकारों द्वारा अपनाई गई नीतियों के कारण वर्षों से लगातार गिरावट आई है। विनिर्माण के सकल मूल्य संवर्धन (जीवीए) में योगदान 2011–12 में 17.5 प्रतिशत से घटकर 2020–21 में 14.4 प्रतिशत हो गया है। सूक्ष्म लघु और मध्यम उद्यम (एमएसएमई) औद्योगिक क्षेत्र में बड़े पैमाने पर रोजगार प्रदान करते हैं और वे महामारी के दौरान बुरी तरह प्रभावित हुए। वास्तव में बड़े उद्योगों पर बहुत कम प्रभाव पड़ा और बोझ एमएसएमई को उठाना पड़ा। सूक्ष्म लघु और मध्यम उद्योग की मदद करने की बात करने के बावजूद केंद्रीय वित्त मंत्री ने उनकी कोई मदद नहीं की। उन्हें केवल कर्ज देने के लिए ऋण के रूप में दो लाख करोड़ रुपये और ऋण गारंटी में पांच लाख करोड़ रुपये आबंटित किए। इसके विपरीत एमएसएमई को जरूरी संस्थागत सुरक्षा उपायों की आवश्यकता है क्योंकि वह बड़ी कंपनियों के सामने विलुप्त होने या उनके स्थानीय ग्राहक बनने का सामना नहीं कर सकते हैं, जहां लगभग सभी मुनाफा बड़ी पूंजी– विदेशी और उनके दलालों– द्वारा हड़प लिया जाता है। 6 करोड़ 30 लाख एमएसएमई में से लगभग 94 प्रतिशत सूक्ष्म और केवल 0.57 प्रतिशत मध्यम आकार के हैं। ये उद्योग ही अधिकांश औद्योगिक श्रमिकों को रोजगार देते हैं और वर्तमान में औद्योगिक विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं। ये उद्योग सरकार द्वारा समर्थित कारपोरेट से अपने अस्तित्व को चुनौती का सामना कर रहे हैं।

आरएसएस–भाजपा सरकार की नीति जैसा कि इस बजट से और स्पष्ट हो जाता है, विदेशी और घरेलू कारपोरेट खिलाड़ियों की मदद करने पर पूरा जोर देने की है। मोदी सरकार द्वारा पूंजीगत व्यय (कैपेक्स) में की गई वृद्धि की बहुत बात की गई है। इस बजट में पूंजीगत व्यय में लगभग 35.4 प्रतिशत की वृद्धि की घोषणा की है हालांकि संशोधित अनुमानों से तुलना करने पर वृद्धि लगभग आधी हो जाती है। दिलचस्प रूप से केंद्र सरकार द्वारा एयर इंडिया को टाटा को सौंपने का कार्य पूरा हो चुका है और उसके ऋणों को भी केन्द्र सरकार के बजट में पूंजीगत व्यय का हिस्सा घोषित किया गया है। एयर इंडिया के लगभग

(शेष पृष्ठ 7 पर)

स्वामीनाथन आयोग की संस्तुति के आधार पर गन्ने के मूल्य का निर्धारण

किसानों को नहीं दिया जा रहा है लागत का डेढ़ गुना

सुभाष त्यागी

(गन्ना पश्चिमी उत्तर प्रदेश की पमुख व्यवसायिक फसल है। गन्ने का मुल्य सरकार द्वारा स्टेट अश्योरड प्राइस के रुप में घोषित किया जाता है। मिलों द्वारा किसानों के गन्ने के भुगतान में देरी क्षेत्र के किसानों की एक बड़ी समस्या है जिससे किसानों द्वारा लागत के लिए गये कर्ज पर ब्याज और बढ़ जाता है। सरकार द्वारा घोषित गन्ने का एश्योरड मूल्य लाभकारी नहीं है। सरकार द्वारा इस मूल्य के निर्धारण के लिए जिस फार्मूले का इस्तेमाल किया जाता है वह लागत के सभी मदों को हिसाब में नहीं लेता। किसान संगठन लागत की गणना सी–2 के हिसाब से करने तथा लागत का डेढ़ गुना मूल्य देने की मांग कर रहे हैं। (स्वामीनाथन फार्मूला) इस लेख में प्रो. सुभाष त्यागी ने सी–2 के ड्योढ़े के आधार पर गन्ने के मूल्य का निर्धारण किया है। प्रो. त्यागी मेरठ जिले में माछरा कालेज में प्राध्यापक रहे हैं।)

कृषि अर्थव्यवस्था ने ही भारत को विश्ववित्तीय एवं आर्थिक संकट के दौरान कुछ हद तक इससे बचाया। वर्तमान, विश्वव्यापी कोविड के दौर में तेज हो रहे आर्थिक संकट से भी बचाने में कृषि क्षेत्र मददगार रहा है। कृषि क्षेत्र केवल खाद्य–सुरक्षा तक ही सीमित नहीं है बल्कि, खेती का विकास देश के मौलिक आर्थिक विकास से जुड़ा है। विकसित हो रही खेती औद्योगिक उत्पादों की खपत को बढ़ाती है एवं कृषि उपज आधारित उद्योगों में वृद्धि करके रोजगार सृजन, विदेशी मुद्रा के अर्जन एवं व्यापार संतुलन बनाने में काफी हद तक सहायक हो सकती है। दुर्भाग्यवश कृषि अर्थव्यवस्था उपेक्षित रहने के कारण इतनी समर्थ नहीं हो सकी। विशेष रूप से, ब्रिटिश शासन काल में औपनिवेशिक शासकों की गुलाम देशों के आर्थिक शोषण तथा रुचि होने के कारण भारत के कृषि क्षेत्र में ठहराव आ गया। उन्होंने केवल अपने उद्योगों के लिए कच्चे माल उत्पादन तक ही खेती को बनाए रखा था।

1947 के बाद खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए वर्ष 1960 के बाद उठाए गये प्रभावी कदम **व IADP (INTENSIVE AGRICULTURAL DISTRICT PROGRAMME) स्वपक्व IAAP (INTENSIVE AGRICULTURAL AREA PROGRAMME)** जो परम्परागत फसलों की उत्पादन वृद्धि से सम्बन्धित थे, इन्हें वर्ष 1965 में कृषि विकास का नया माडल 'हरित क्रान्ति' को अपनाकर बदल दिया गया। हरित–क्रान्ति से देश के कुछ भागों में कुछ फसलों के उत्पादन और उत्पादन क्षेत्र में तेजी से वृद्धि हुई परन्तु बहुत सी फसलों के क्षेत्र में भारी गिरावट आयी। इसका सबसे खराब प्रभाव यह रहा कि पशुशक्ति आधारित कृषि यंत्र तीव्र गति से चलन से हट गये और पूंजीवादी कृषि तकनीकी शक्ति चालित कृषि यंत्रों, उर्वरक, कीटनाशक एवं खरपतवार नाशक दवाईयों का प्रयाग बढ़ने से जहां भूमि तथा जल दूषित हुआ वहीं जमीन की उत्पादकता बदल गई। इस बदलाव के कारण कृषि उत्पादन लागत बहुत तेजी से बढ़ी।

वर्ष 1991 में आर्थिक सुधारों के नाम पर निजीकरण–उदारीकरण–भूमंडलीकरण का दौर शुरु हुआ। इस दौर में कृषि क्षेत्र को दिये जाने वाले सरकारी संरक्षण (सब्सिडी) में लगातार प्रभावी कटौती हुई और कृषि क्षेत्र को बैंक ऋणों की सुविधाओं में वृद्धि हुई। एक तरफ बाजारों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के मंहगे बीज, कीटनाशक, खरपतवार नाशक व कृषि उपकरणों की भरमार और प्रचार ने उत्पादन लागत में वृद्धि कर दी, दूसरी ओर कृषि फसलों के लाभकारी मूल्य न मिलने के कारण किसानों को कर्ज चुकाना असम्भव हो गया और देश के विभिन्न भागों में लगातार किसानों की आत्महत्याओं ने कृषि इतिहास में एक काला पन्ना जोड़ दिया। कृषि अर्थव्यवस्था को सुधारने के लिए किसानों और कृषि मजदूरों की आमदनी को सुनिश्चित करने के लिए कृषि फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य की कानूनी गारंटी करने के बजाय 5 जून 2020 को कोविड लॉकडाउन के समय भारत सरकार ने अध्यादेश लाकर तीन कृषि कानूनों की घोषणा कर दी। ये तीनों कृषि कानून ब्रिटिश शासन काल से अब तक के हुए कृषि सुधारों में किसानों के सबसे अधिक विरुद्ध और कारपोरेट घरानों के पक्षधर थे। इन तीन कृषि कानूनों के विरोध में किसान संगठनों ने सम्पूर्ण देश में जनजागरण और धरना प्रदर्शन किये। 26 नवम्बर 2020 से लगातार एक वर्ष से भी अधिक संयुक्त किसान मोर्चे के नेतृत्व में विश्व ऐतिहासिक किसान आन्दोलन दिल्ली बार्डरों पर चला। इस आन्दोलन में 700 से अधिक आन्दोलनकारी किसान शहीद हुए।

फसलों के न्यूनतन समर्थन मूल्य की कानूनी गारंटी क्यों?

निसंन्देह कृषि विकास के अब तक अपनाये गये माडल एवं नीतियों ने श्रम आधारित कृषि उत्पादन को बदला है तथा पूंजी की भूमिका को बढ़ाया है। वर्तमान उभरते कृषि परिदृश्य में मंहगे कृषि उपकरण, बीज, उर्वरक, कीटनाशक व खरपतवार नाशक दवाईयां, डीजल और बिजली की बढ़ती हुई कीमत फसल उत्पादन में लागत को लगातार बढ़ाती जा रही है। परिणामतः किसानी बनाये रखने के लिए कर्ज लेकर खेती करना अपरिहार्य हो गया है। यहां यह भी उल्लेख करना अनिवार्य है कि फसल लागत के बढ़ने और उत्पादन मूल्य की गारंटी न होने के कारण खेती करने का मूलभूत साधन – जुताई का हल भी किसान की पहुँच से बाहर हो गया। गुंजन शर्मा (2014) ने चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय में जमा किये शोध प्रबन्ध में स्पष्ट किया है कि जनपद मेरठ के विकास खण्ड माछरा के अन्तर्गत वर्ष 2010 तक 90 प्रतिशत सीमान्त, 67 प्रतिशत लघु और 30 प्रतिशत अर्द्धमध्यम भू–जोत श्रेणी के किसान अपने हाथ से जुताई के साधन खो चुके थे। कृषि उत्पादन लागत को बहुत हद तक सरकारी संरक्षण (सब्सिडी) कम कर सकती है परन्तु, **WTO** की शर्तों के पालन से कृषि सब्सिडी समाप्त हो रही है और बाजारी शक्तियों को लूट की खुली छूट मिलने के कारण उत्पादन लागत में लगातार तेजी से वृद्धि दर्ज की जा रही है।

कृषि उत्पादन का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष उपजों का मूल्य है। कृषि क्षेत्र में उत्पादनकर्ता अपने उत्पाद का स्वयं मूल्य तय नहीं करता है। कहा जाता है कि वस्तु की मांग और आपूर्ति मूल्य निर्धारण करते हैं, परन्तु कृषि उपजों की कीमत में प्रतिदिन, सीजनल एवं वार्षिक उतार–चढ़ाव रहना सामान्य प्रक्रिया है। कृषि उपजों के मूल्यों को **WTO** की शर्तें, आयात नीति, आयात कर, खाद्य उद्योगों में विदेशी निवेश, डम्पिंग प्रक्रिया इत्यादि भी प्रभावित करते हैं। भारत में उत्पादन लागत के बाद कृषि फसलों की उचित मूल्य पर खरीदारी न होना देश की कृषि अर्थव्यवस्था एवं किसानी और खाद्य सुरक्षा के लिए खतरे की घंटी है। अतः उपर्युक्त तथ्यांक के अनुसार फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य की कानूनी गारंटी आवश्यक है। इस तथ्य को विस्तार से समझने के लिए पश्चिमी उत्तर प्रदेश की प्रमुख फसल गन्ना उत्पादन लागत को इस अध्ययन में स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र

प्रस्तुत अध्ययन पश्चिमी उत्तर प्रदेश पर आधारित है। उत्तर प्रदेश राज्य देश में सबसे अधिक गन्ना पैदा करता है। इस राज्य में देश के सम्पूर्ण गन्ना क्षेत्रफल का 51 प्रतिशत क्षेत्रफल फैला हुआ है। देश के कुल गन्ना उत्पादन का 50 प्रतिशत और सम्पूर्ण चीनी उत्पादन का 38 प्रतिशन चीनी का उत्पादन उत्तर प्रदेश राज्य करता है। देश की कुल 520 चीनी मिलों में से 119 चीनी मिल उत्तर प्रदेश में स्थित है। वर्ष 2020–21 में प्रति हेक्टेअर गन्ना उत्पादन की दृष्टि से जनपद शामली सम्पूर्ण राज्य में प्रथम स्थान पर (843.56 कुंतल प्रति हेक्टेअर), जनपद मेरठ (832.28 कुन्तल प्रति हे0) और जनपद मुजफ्फरनगर (828.56 कु./हे0) क्रमशः दूसरे और तीसरे स्थान पर रहे हैं। पश्चिमी उत्तर प्रदेश की एक मात्र प्रमुख व्यवसायिक फसल गन्ना होने के कारण यह फसल यहां की ग्रामीण अर्थव्यवस्था और राजनीति को भी प्रभावित करती है। गन्ना एक ऐसी फसल है जो पूरे वर्ष कृषि श्रमिकों को रोजगार देने में सहायक है।

गन्ना फसल चीनी उद्योग के केन्द्रीकरण को अपने उत्पादन क्षेत्र में करने की प्रवृत्ति रखती है। चीनी उत्पादन के अतिरिक्त – शराब, एथिनॉल, सेनेटाइजर, गत्ता, शीरा एवं बिजली उत्पादन का भी आधार गन्ना है। गन्ने पर आधारित परम्परागत घरेलू और कुटीर उद्योग – गुड़, शक्कर, खांड, सल्फर हैं। ये सभी उद्योग पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गन्ना फसल के कारण केन्द्रित हैं। यहां उल्लेख करना अनिवार्य है कि पश्चिमी उत्तर प्रदेश की राजनीति को भी गन्ना फसल काफी हद तक प्रभावित करती है। चीनी मिलों का पिराई सत्र आरम्भ होने का समय, गन्ना पर्चियों की उपलब्धता, खरीद केन्द्रों पर घटतौली, सोसाइटियों की धांधलेबाजी, गन्ना मूल्य भुगतान और गन्ना फसल का न्यूनतम समर्थन मूल्य, आदि किसानों के संघर्ष के मुख्य मुद्दे हैं।

अध्ययन विधि तंत्र

प्रस्तुत अध्ययन वर्ष 2020–21 को आधार मानकर किया गया है। इस अध्ययन के लिए सीमान्त, लघु, अर्द्ध–मध्यम, मध्यम और बड़ी भू–जोत वाली श्रेणियों में से प्रति भू–जोत श्रेणी से दो–दो, कुल दस कृषक प्रतिनिधियों का रेण्डम चयन किया गया है। भू–स्वामित्व निर्धारण हेतु स्वयं की भूमि + किराये पर ली गयी भूमि को आधार माना गया है। गन्ना उत्पादन लागत की जानकारी प्राप्त करने के लिए अनुसूची का प्रयोग किया गया है तथा दस चयनित कृषक प्रतिनिधियों से स्वयं अलग–अलग समय पर साक्षात्कार करके जानकारी प्राप्त की गयी है। सभी सूचनाएं प्रति हेक्टेअर यूनिट इकाई को आधार बनाकर एकत्र की गयी है।

इस प्रकार प्राप्त आंकड़ों की गणना हेतु सर्वप्रथम प्रत्येक भू–आकार श्रेणी से चयनित दो कृषक प्रतिनिधियों के लागत मूल्य मानों के औसत मान प्राप्त किये गये है। इसके पश्चात फसल उत्पादन लागत की प्रत्येक मद जैसे जुताई, खुदाई, ढुलाई, गन्ना छिलाई आदि के लिए सभी भू–आकार श्रेणियों के औसत मानों का औसत ज्ञात करके प्रत्येक मदवार लागत मूल्य प्राप्त किया गया है। श्रम लागत प्रति मजदूर प्रतिदिन, ढुलाई प्रति ट्राली/बुग्गी, सिंचाई प्रति घंटा, गन्ना छिलाई प्रति कुंतल मानकर लागत गणना की गयी है। अध्ययन में भूमि का किराया, जुताई, खुदाई, ढुलाई, गन्ना बंधाई, सिंचाई, छिलाई, कीटनाशक स्प्रे, उर्वरक छिटवाई, आदि लागत मूल्य क्षेत्र में प्रचलित दरों के आधार पर तय किये गये हो। रसायनिक उर्वरक एवं कीटनाशकों की लागत बाजार मूल्यों के आधार पर लिये गयी है। जोखिम लागत की गणना प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के आधार पर कुल बीमित राशि को 5 प्रतिशत किसान प्रीमियम राशि (जो व्यवसायिक फसलों/बागों पर लागू है) ली गयी है। इसकी गणना प्रति हेक्टेअर गन्ना मूल्य को कुल बीमित राशि मानकर की गयी है। गन्ने का औसत उत्पादन पौधा गन्ना फसल उत्पादन 55 कुन्तल, पेडी गन्ना 50 कुंतल प्रति बीघे की दर से प्रति हेक्टेअर उत्पादन ज्ञात किया गया है।

गन्ने से प्रति कुन्तल आय की गणना वर्ष 2020–21 में अगैती गन्ना प्रजाति मिल दर 316.65 रुपये प्रति कुंतल की दर से की गयी है। सकल आय ज्ञात करने के लिए गन्ना मूल्य से प्राप्त धन राशि एवं गन्ने के ऊपरी भाग की हरी पत्तियां जो अगोला कहलाती हैं और सूखी पत्तियां 'पत्ती' से प्राप्त धन राशि को जोड़ा गया है। गन्ने को एक बार लगाने के बाद लगभग 18 महीने में एक खेत से दो फसल देता है। पहली फसल पौधा और दूसरी फसल पेड़ी गन्ना कहलाती है। अध्ययन को न्यायोचित बनाने के लिए प्रति कुन्तल औसल लागत की गणना पौध फसल और पेडी गन्ना फसल की प्रति कुन्तल लागत मूल्यों को जोड़ कर प्रति कुन्तल औसत लागत ज्ञात की गयी है जो सी–2 प्रति कुन्तल गन्ना उत्पादन लागत है।

गन्ना उत्पादन लागत का विवरण

अध्ययन हेतु अपनाये गये उपरोक्त विधि तन्त्र अनुसार प्रति हेक्टेअर गन्ना उत्पादन लागत का मदवार विस्तृत विवरण निम्न तालिका में अंकित है।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गन्ना उत्पादन लागत प्रति हेक्टेअर/कुन्तल

अगैती प्रजाति, आधार वर्ष 2020–21

उत्पादन लागत की मद	पौधा गन्ना लागत प्रति हेक्टेअर दर	रूपयों में	पेडी गन्ना लागत प्रति हेक्टेअर रूपयों में
ए. कार्यशील लागत			
1. खेती की तैयारी			
जुताई – 2 बार हैरो	250 प्रति कच्चा बीघा	4000	
जुताई – 2 बार टिलर	250 कच्चा बीघा	4000	
पाट्टा – 1 बार	100 कच्चा बीघा	1600	
2. गोबर की खाद			
16 ट्राली गोबर खाद	1000 ट्राली (आधी कीमत)	8000	8000
खाद ढुलाई	400 प्रति ट्राली	6400	
खाद फैलाना			
2 श्रमिक 2 दिन	400 प्रतिदिन 1 श्रमिक	1600	
जुताई–1 खाद के बाद	125 प्रति बीघा 1 बार	2000	
मेढ़ बनाई पलेवा के लिए (1 श्रमिक 2 दिन)	400 प्रतिदिन	800	
3. खेत का पलेवा			
20 घंटे ट्यूबवैल से	50 प्रति घंटा	1000	
पानी चलाने का (1 श्रमिक 2 दिन)	400 प्रतिदिन	800	
4. गन्ना लगाने हेतु खेत की तैयारी			
जुताई – 4 बार टिलर	250 कच्चा बीघा	8000	
पाटा – 3 बार	100 कच्चा बीघा	4800	
5. गन्ना बुवाई			
गन्ना बीज – 80 कु0	316.65 प्रति कु0	25332	
बीज तैयार करने का श्रम	40 प्रति कु0	3200	
गन्ना बुवाई का श्रम	300 कच्चा बीघा	4800	
गन्ना बुवाई ट्रैक्टर का खर्च मय पाटा लगाई	350 कच्चा बीघा	5600	
6. बुवाई के समय उर्वरक/कीटनाशक			
डी.ए.पी. 160 किलो	24 प्रति किलो	3840	
रिजेन्ट – 16 किलो	80 प्रति किलो	1280	
उर्वरक छिटकने का श्रम (4 बोरा)	50 प्रति बोरा	200	
फावड़े से मेढ बनाई (1 श्रम – 4 दिन)	400 प्रति दिन	1600	
7. फसल की निराई–गोडाई			
कल्टीवेटर – 2 बार	200 प्रति बीघा	6400	
हल से – 2 बार	200 प्रति बीघा	6400	6400
फावड़े से खुदाई 2 बार	350 प्रति बीघा पौधा	11200	12800
8. सिंचाई			
सिंचाई 10 ट्यूबवैल 20 घंटा प्रति सिंचाई = 200 घंटा	50 प्रति घंटा	10000	10000
श्रम सिंचाई 1 श्रमिक 20 दिन	400 प्रति दिन	8000	8000
9. उर्वरक/कीटनाशक			
यूरिया – 675 किलो/हे0	6 प्रति किलो	4050	4050
	रिजेन्ट 16 किलो	80/– किलो	1280
श्रम – यूरिया छिटकना 675 किलो यूरिया = 15 बोरा	50 प्रति बोरा	750	750
	डी.ए.पी 16 कि0	24/– कि0	3840
कोराजन 450 ग्राम/हे0	1900 प्रति 150 ग्राम	5700	5700
श्रम कोराजन स्प्रे–48 टंकी	30 प्रति टंकी	1440	1440
कीटनाशक स्प्रे 1000 ली0 पानी	1 प्रति ली0	1000	1000
साइपर 1.5 ली.	700 प्रति ली0	1050	1050
19:19 एन पी.के. 3 कि0	120 प्रति कि0	360	360
कोनिका 750 ग्राम	600 प्रति 250 ग्राम	1800	1800
10. गन्ना बंधाई – 2 बार	350 प्रति बीघा	11200	11200
11. गन्ना छिलाई व कटाई			
40 प्रति कु0		औसत 880 कु./हे0 35200	औसत 800 कु./हे0 32000
12. गन्ना ढुलाई			
20 कु./बुग्गी –300 प्रति बुग्गी	44 बुग्गी	13200	40 बुग्गी 12000
कुल कार्यशील लागत		206602	121670

बी. ऊपरी लागत

		पौधा गन्ना	पेडी गन्ना
1. भूमि का किराया वार्षिक	5000/बीघा	80000	40000
			6 माह का भूमि किराया
2. कार्यशील पूंजी पर ब्याज 6 माह	6 प्रतिशत दर	6198 3650	

सी. प्रबंधन एवं जोखिम लागत

1. प्रबंधन लागत = लागत (ए+बी का 206602 + 86198 = 292800)	5 प्रतिशत	14640	लागत (ए+बी = 121670+13650= 165320) 8266
2. जोखिम लागत प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना	कुल बीमित राशि का 278652/– पर 5: की दर से प्रीमियम राशि		कुल बीमित राशि का 253320/– पर 5: की दर से प्रीमियम राशि
व्यापारिक फसलों/ बागवानी पर प्रति हे0 5: की दर से प्रीमियम		13932	12666
कुल प्रबंधन एवं जोखिम लागत		28574	20932

कुल उत्पादन लागत प्रति हे0 = लागत ए + लागत बी + लागत सी

206602+86198+28572 = 321372 | 121670+43650+20932 = 186252

सकल आय प्रति हेक्टेअर

	पौधा गन्ना	पेडी गन्ना
1. गन्ना उत्पादन	888 कुं0/हे0	800 कु./हे0
	55 कु./बीघा	50 कु./बीघा
मिल रेट अगैती प्रजाति	880 र 316.65	800 र 316.65
316.65/कुं.	= 278652	= 253320
2. अगौला		
10.5 /कुं0 गन्ने से	92 कु0 अगौला	84 कुं. अगौला
80रु./कुं.	7360	6720
3. पत्ती		
3:/कुं. गन्ना	26 कुं. पत्ती	24 कुं. पत्ती
15रु./कुं.	390	360
	286402	260400 कुल आय

प्रति कुं. गन्ना उत्पादन लागत

कुल लागत/कुल आय र प्रति कुं. गन्ना मूल्य

पौधा गन्ना 321372/286402 र 316.65 = 355.31

पेड़ी गन्ना 182652/260400 र 316.65 = 226.48

पौधा गन्ना + पेडी गन्ना की औसत लागत प्रति कुंतल

= (355.31+226.48)/2 = 290.89

अतः सी 2 गन्ना उत्पादन लागत प्रति कुंतल = 290.89

सी 2 + 50 फीसदी प्रति कुंतल गन्ना मूल्य = 290.89+145.44 = 436.33

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि गन्ना फसल उत्पादन लागत के तीन प्रमुख भाग हो : ए– कार्यशील लागत, बी– ऊपरी लागत, सी– प्रबंधन एवं जोखिम लागत। इन सभी लागतों का विस्तृत विवरण तालिका में स्पष्ट अंकित है। कुल फसल लागत प्राप्त करने के लिए उत्पादन लागत ए + बी + सी को जोड़ने पर :

पौधा गन्ना कुल लागत = 206602 + 86198 + 28572 = 321372 रुपये प्रति हेक्टेअर

पेडी गन्ना कुल लागत = 131670 + 43650 + 20932 = 186252 रुपये प्रति हेक्टेअर

इसी प्रकार प्रति हेक्टेअर सकल आय = गन्ने की कीमत + अगौले की कीमत + पत्ती की कीमत

पौधा गन्ने की सकल आय = 278652 + 7360 + 390 = 286402 रुपये प्रति हेक्टेअर।

पेडी गन्ने की सकल आय = 253320 + 6720 + 360 = 260400 रुपये प्रति हेक्टेअर।

प्रति कुन्तल औसत लागत ज्ञात करने के लिए कुल लागत को कल आय से भाग करने पर जो मान प्राप्त हुआ उसे प्रति कुन्तल गन्ना मूल्य से गुणा करने पर पौधा गन्ना प्रति कुंतल उत्पादन लागत 355.31 रुपये और पेडी गन्ना प्रति कुंतल लागत 226.48 रुपये प्राप्त हुई है।

अन्त में पौधा गन्ना और पेडी गन्ना फसल की प्रति कुंतल उत्पादन लागत क्रमशः 355.31 + 226.48 = 581.79 रुपये का औसत मान 290.89 रुपये प्रति कुंतल औसत गन्ना लागत अर्थात सी2 गन्ना लागत प्रति कुंतल है।

अतः गन्ने का न्यूनतम समर्थन मूल्य तथा गन्ने के संदर्भ में राज्य निर्देशित मूल्य (एस.ए.पी.) सी 2 + 50 फीसदी = 290.89 + 145.44 = 436.33 रुपये प्रति कुंतल होना चाहिए।

यहां यह भी स्पष्ट करना प्रासंगिक है कि पेड़ी गन्ने कर अवधि 6 माह आंकी गई है। इसके बाद दूसरी फसल पछेती होती है तथा उसका लागत मूल्य उपज की अपेक्षा कुछ अधिक होता है। उस पक्ष को इस गणना में नहीं लिया गया है।

देश में बेरोजगारी की भयावह समस्या

बेरोजगारी के खिलाफ वृहत आंदोलन

अनिल दुबे

एक छोटा सा कमरा– बमुश्किल बिस्तर या चारपाई लगाने के बाद सिर्फ इतनी जगह कि स्टोव या हीटर सें खाना बनाया जा सके। पीलापन लिए खोई आंखों, बेतरतीब बढ़ी दाढ़ी, वर्षों से झुककर पढ़ते कमानीदार पीठ वाले लड़के जिनका नाम, जाति और पता कुछ भी हो सकता है। वर्षों से चतुर्थ श्रेणी या लेखपाल की नौकरी से लेकर आइएएस तक की परीक्षाओं की तैयारी में जुटे हैं, जो घर अब कम जाते हैं कि लाज आती है। वर्षों की पढ़ाई के बाद भी एक अदद नौकरी नहीं मिली अब घर परिवार के लोग भी सवाल उठाते हैं। उनकी शादियां नहीं हो रही, क्योंकि बेरोजगार से कोई अपनी लड़की का विवाह नहीं करना चाहता। इसलिए ग्रेजुएट, पोस्ट ग्रेजुएट होने के बाद टाइमपास व गांव–घर को बताने के लिए पीएचडी या एलएलबी में दाखिला है। जवान होने से पहले बुढ़ा रहे ये युवा भूमिहीन किसानों या कुछ बीघे के काश्तकार किसानों, किसी शहर–कस्बे में रेहड़ी, खोमचा लगाने या कोई छोटी–मोटी नौकरी कर रहे पिताओं के बच्चे हैं जिन्हें मुश्किल से 3–4 हजार रुपया महीना भेजा जाता है, जिससे 2000 के लगभग कमरे का किराया और शेष खाने और कंपटीशन के लिए किताबों या पत्रिकाओं पर खर्च होता है। किताबें और पत्रिकाएं भी इतनी लुंज हो चुकी हैं कि उसके पन्ने भी अपने कागज होने का एहसास छोड़ चुके हैं, लेकिन नौकरी पाने की आस नहीं टूटती। लिहाजा परीक्षा दर परीक्षा और उनके परिणामों का अंतहीन इंतजार जारी है।

किसी भी महानगर की झोपड़पट्टी में एक झुग्गी साइज उतना ही है कि बिस्तर के नाम पर गुदड़ी में दो–तीन बच्चे पति–पत्नी कमर सीधी कर सकें और दिन में उन्हें समेट कर खाना बना–खा सकें। पुरूष निर्माण श्रमिक, दिहाड़ी मजदूर, रिक्शा चालक, सिक्योरिटी गार्ड या शहरों में ऐसा ही कुछ अस्थाई काम करने वाला और महिला घरों में काम करने वाली, शहरी भाषा में कामवाली या बाई। दोनों की साझा चिंता है कि काम नहीं है। पहले कई घरों में काम था अब 1–2 घरों तक सिमट गया है, क्योंकि मालिक– मालकिन भी बेकाम हो गए हैं। नया काम कैसे मिले और कल की रोटी का सवाल आंखों में तैरता रहता है।

पाश कॉलोनी जैसा कहा जा सकने वाला महानगर का वह हिस्सा जो सस्ते ब्याज दरों और कथित आर्थिक उदारीकरण के तहत लोन इकोनॉमी के गुब्बारे की तरह बेतरतीब फूल चुका है, उसमें आईटीआई, पॉलिटेक्निक, बीटेक धारक डिग्री वाले इंजीनियर, तमाम दफ्तरों के डाटा ऑपरेटर जिन्होंने कुछ वर्ष पूर्व ही फ्लैट ले लिए थे। अब छंटनी अथवा वेतन में कटौती के बाद किस्त भरने में भी लाचारी महसूस कर रहे हैं। बच्चों की फीस न देने से स्कूल भी छूट चुका है नई नौकरी के आसार नहीं है और चल रही नौकरी में अधिक वेतन के लिए 'स्विच ओवर' नामुमकिन है।

उपरोक्त तस्वीरें आरएसएस–भाजपा की नरेंद्र मोदी सरकार के 'अमृत काल' का मात्र एक नमूना भर हैं। ऐसी असंख्य तस्वीरें किसानों, मजदूरों, कर्मचारियों, छात्रों, व्यापारियों और मध्यम आय वर्ग के विभिन्न पेशों में लगे लोगों की हैं। गंभीर आर्थिक संकट, भयावह बेरोजगारी और बेतहाशा बढ़ रही महंगाई के बावजूद बकौल नरेंद्र मोदी सरकार भारत अमृत काल में प्रवेश कर चुका है, जो अगले 25 वर्षों तक देश की 'आजादी' की सौवीं वर्षगांठ तक रहेगा। अमृत काल के फसाने की हकीकत को नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो की रिपोर्ट से भी समझा जा सकता है। 2018 में 12936 लोगों ने बेरोजगारी से तंग आकर आत्महत्या की थी। बेरोजगारी की यही तस्वीरें नहीं हैं। विविधताओं वाले देश में बेरोजगारी की समस्याएं भी भिन्न प्रकार की हैं।

बेरोजगारी के कई प्रकार हैं शिक्षित, उच्च शिक्षित, उच्च शिक्षण संस्थानों से व्यवसायिक रूप से प्रशिक्षित, अल्प शिक्षित लेकिन तकनीकी तौर पर कुशल, अर्ध कुशल और बड़ी संख्या में अशिक्षित श्रमिकों का तबका है। समानता यह है कि सभी तबकों में बेरोजगारी भयावह रूप से है। उच्च तकनीकी ज्ञान में प्रशिक्षित लोग कुछ वर्ष पूर्व तक बेहतर रोजगार पाते रहे हैं लेकिन कोरोना संकट में वह भी बड़े पैमाने पर छंटनी और वेतन कटौती के शिकार हुए हैं। नोटबंदी, जीएसटी के अलावा कोरोना महामारी के दौर में 6.30 करोड़ सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्योग (एमएसएमई) की तबाही ने बेरोजगारी का संकट भयावह कर दिया है। 2–3 कर्मचारियों से लेकर सौ से अधिक श्रमिकों को रोजगार देने वाला एमएसएमई क्षेत्र तबाह हुआ है, जो लगभग करोड़ों लोगों को नियमित या मौसमी (कुछ माह का अस्थाई) रोजगार देता रहा है।

सरकारी नौकरी देश में मात्र 3.75 प्रतिशत लोग ही करते हैं। सबसे ज्यादा नौकरी एमएसएमई और और असंगठित क्षेत्र में लोगों को मिलती है, जो नोटबंदी और कोरोना के कारण टूट चुका है। सबसे बाद में वह लोग हैं, जो अपनी शिक्षा के अनुरूप नौकरी या रोजगार न मिलने से परेशान हैं लेकिन यह बीते दिनों की बात है क्योंकि अब नौकरी में पसंद–नापसंद का सवाल ही नहीं रहा। रेलवे भर्ती को लेकर हुई अनियमितता से पिछले माह बिहार के पटना से लेकर यूपी के प्रयागराज तक के कई शहरों के शिक्षा केंद्र जो अब मूलतः कोचिंग हब बन चुके हैं में बेरोजगारों का गुस्सा सड़कों पर भड़क उठा था। परीक्षार्थियों का गुस्सा अचानक नहीं भड़का इसके पीछे वर्षों की बेरोजगारी, परीक्षाओं की अनिश्चितता, नौकरियां न निकलने, परिणाम न आने और किसी तरह का रोजगार ना मिल पाने से उनके आक्रोश का स्वतःस्फूर्त विस्फोट था। यह आंदोलन ठहर जरूर गया है लेकिन छात्रों, युवाओं, बेरोजगारों के आंदोलनों का सिलसिला आगे भी दिखाई देता रहेगा।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की 41 प्रतिशत जनता 20 वर्ष से कम आयु की थी। इस लिहाज से आज 136 करोड़ की आबादी में 50 प्रतिशत हिस्से की आयु लगभग 25 वर्ष से कम है और 65 प्रतिशत की आयु 35 वर्ष से कम है। संयुक्त राष्ट्र संघ की 2014 की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत दुनिया का सबसे युवा देश है जहां 35.6 करोड़ आबादी युवाओं की है। यह संख्या अब 45 करोड़ के आसपास होगी। भारत जैसे देश जहां दुनिया की सर्वाधिक उपजाऊ जमीन, सभी तरह की खनिज संपदाएं और कई मौसम हैं वहां युवाओं की इतनी बड़ी आबादी एक बहुत बड़ा उत्पादक कार्यबल हो सकता है। आरएसएस–भाजपा की सरकार वर्ष 2014 में इसी विशाल युवा आबादी को प्रतिवर्ष दो करोड़ नौकरी देने का वायदा देकर आई थी, लेकिन रोजगार देने के बजाय वह उन्हें अपने कारपोरेट मित्रों के आगे सस्ते मजदूर के तौर पर निस्सहाय छोड़ दे रही है। उसमें से एक छोटे हिस्से को नफरत की फैक्ट्री में अपने फासिस्ट एजेंडे को लागू करने का माध्यम बना रही है।

बेरोजगारी के वास्तविक आंकड़ों को लेकर भ्रम बनाए रखा जाता है और सरकारें वास्तविक संख्या जानने व उन्हें सार्वजनिक करने की कोशिश नहीं करतीं। देश के प्रधान आर्थिक सलाहकार राजीव सान्याल ने आर्थिक सर्वे 2021 के आने से 1 दिन पहले कहा कि देश में बेरोजगारी का कोई रियल टाइम डाटा नहीं है। वहीं जिलों में स्थापित रोजगार कार्यालय खुद बेरोजगार हैं क्योंकि ना तो कोई बेरोजगार युवा वहां पंजीकरण कराने जाता है और ना ही ऐसा जानकारी में आया है कि किसी को रोजगार के लिए बुलावा आता हो।

बेरोजगारी को लेकर डाटा सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनामी (सीएम आईई) के ताजा आंकड़ों के अनुसार दिसंबर 2021 में 5.3 करोड लोग बेरोजगार थे। इसमें 3.5 करोड़ ऐसे बेरोजगार हैं जिन्हें तुरंत नौकरी चाहिए। इसमें 80 लाख महिलाएं भी हैं। 1.7 करोड़ ऐसे युवा हैं, जो नौकरी चाहते हैं लेकिन अभी पढ़ाई भी कर रहे हैं। वर्ल्ड बैंक के अनुसार भारत में कोरोना काल में 43 प्रतिशत लोग बेरोजगार हुए हैं। वहीं दूसरी ओर एनएसओ का सर्वे दिसंबर 2020 में सभी उम्र के बेरोजगारों की संख्या 10.03 प्रतिशत बता चुका है। इससे पूर्व वर्ष 2020 के जुलाई से सितंबर के बीच बेरोजगारी दर 13.02 प्रतिशत थी। एनएसओ ने 2020–21 के अप्रैल से जून की तिमाही में बेरोजगारी की दर 20.8 प्रतिशत बतायी थी।

इन आंकड़ों से इतर एक वास्तविक आंकड़ा भारत सरकार का ई श्रम पोर्टल है जो जुलाई अगस्त 2021 से शुरू हुआ और जनवरी 2022 तक 25 करोड़ लोग रजिस्ट्रेशन करा चुके हैं। योजना के तहत सरकार 1000 रुपए देती है। असंगठित क्षेत्र में काम करने वाला व्यक्ति ही ई श्रम कार्ड बनवा सकता है। बीते 2 वर्षों में गांवों में मनरेगा के तहत काम मांगने वालों की संख्या 45 प्रतिशत बढ़ी है। वर्ष 2021 में लगभग 16 हजार करोड़ रुपया कई राज्यों में भुगतान के लिए बकाया है। याने मजदूरों से काम कराने के बावजूद उन्हें भुगतान नहीं मिला है। फिर भी अमृत काल के आम बजट में मनरेगा के बजट में 25 हजार करोड़ रुपए की कमी की गई है।

शासक वर्गों की राजनीतिक पार्टियां विशाल जनसंख्या को बेरोजगारी का कारण बताती रही हैं, लेकिन क्या वास्तव में देश में सरकारी और निजी क्षेत्र में रोजगार नहीं है ? इसका जवाब दोनों क्षेत्रों में अलग–अलग रूप से देखा जा सकता है। भारत के 28 राज्यों व 8 केंद्र शासित प्रदेशों में पिछले वर्ष के दिसंबर माह में 80 लाख 50 हजार 977 और केंद्र सरकार के अधीनस्थ विभागों में 9 लाख 10 हजार 153 स्वीकृत पद रिक्त थे।

दरअसल सरकारी नौकरियों में भर्ती पर रोक की शुरुआत 1991 में नरसिंह राव सरकार के समय तब शुरू की गई, जब आर्थिक उदारीकरण और मुक्त अर्थव्यवस्था की नीति शुरू की गई। उस समय केंद्र सरकार ने सभी राज्यों को निर्देश जारी किया था कि वह सरकारी नौकरियों में भर्तियां तत्काल प्रभाव से रोक दें। उल्लेखनीय है कि उस समय रेलवे में लगभग 16 लाख स्थाई और 3 लाख के आसपास ठेके पर काम करने वाले दिहाड़ी मजदूर होते थे। आज रेलवे में यह संख्या अनुमानित 11 लाख से कम है। उसमें भी बड़ी संख्या ठेका श्रमिकों और कर्मचारियों की है। बाद के वर्षों में अटल बिहारी बाजपेई की राजग और कांग्रेस की मनमोहन सिंह की यूपीए सरकारों ने वीआरएस देने की नीति शुरू की। बड़ी संख्या में कर्मचारियों व अधिकारियों को स्वेच्छा या जबरन रिटायर करना शुरू कर दिया गया और फिर रिक्त पदों पर भर्तियां नहीं की गईं जबकि वह पद आवश्यक होने के कारण स्वीकृत पद बने हैं।

देश भर में कितनी सरकारी नौकरियां हैं इसके आंकड़े समय–समय पर सरकार लोकसभा और राज्यसभा में सांसदों के सवालों के लिखित जवाब में देती रही है। दिसंबर 2021 में रेलवे में 3 लाख 62 हजार, थल सेना में एक लाख 75 हजार, वायु सेना में 8000, नौसेना में 12000, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में 2 लाख, केंद्र सरकार के अस्पतालों में एक लाख 68 हजार, आंगनबाड़ी में एक लाख 76000, केंद्रीय विद्यालयों में 18000, नवोदय विद्यालयों में 16000 और केंद्रीय

पत्रिका के नियमित प्रकाशन के लिए सभी पाठकों से अनुरोध

- *पत्रिका की प्रति का मूल्य इस अंक से बढ़ाया जा रहा है। कृपया अपना सहयोग बनाये रखें।*
- *कृपया पत्रिका की प्रतियों की राशि समय पर पहुंचाएं।*
- *पत्रिका के लिए लेख व रिपोर्ट नियमित रूप से भेजें।*
- *पत्रिका के ग्राहक बढ़ाने में सहयोग करें।*
- *पत्रिका के बारे में अपने सुझाव भेजें।*

बेहद जरूरी है

विश्वविद्यालयों में 20 हजार पद रिक्त हैं। केंद्र सरकार के अन्य शैक्षणिक संस्थानों में 1662 पद आईटीआई, 7412 एनआईटी, 4662 आईआईएम, 946 सीबीआई, 1342 रिसर्च एंड एनालिसिस विंग, 190 केंद्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड, 1085 रक्षा क्षेत्र में अधिकारियों के, 88 केंद्रीय अप्रत्यक्ष कर शुल्क बोर्ड, 2127 आईबी, 123 भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक के दफ्तरों में, 1403 इंडियन ऑडिट एंड अकाउंट्स डिपार्टमेंट, 250 प्रवर्तन निदेशालय, 114 विदेश मंत्रालय, 190 केंद्रीय सचिवालय में रिक्त थे।

इसके अलावा सुप्रीम कोर्ट, हाईकोर्ट और जिला न्यायालय में जजों के लगभग 5000 पद, 28 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों के 8 लाख 37 हजार, 28 राज्यों के पुलिस कर्मियों के 5 लाख 31 हजार स्वीकृत पद रिक्त हैं। केंद्र व राज्यों के अन्य विभागों में स्वीकृत रिक्त पदों की सूची अलग है, जहां वर्षों से भर्तियां नहीं हो रही हैं। सरकारी दफ्तरों और पीएसयू में नौकरी ना होने की बड़ी वजह तेजी से हो रहा निजीकरण है। रेलवे, बैंकिंग, एयरलाइंस, एयरपोर्ट, बीएसएनएल, एलआईसी, बिजली जैसे तमाम सार्वजनिक क्षेत्रों के उपक्रमों में जहां लाखों लाख लोगों को रोजगार मिलता था उनका तेजी से निजीकरण किया जा रहा है। मोदी ने सत्ता में आने के लिए नौकरी को चुनावी मुद्दा बनाया था। वर्ष 2014 के चुनाव के समय ही रेलवे में रिक्त पदों पर भर्ती होनी थी, लेकिन 2018 तक नहीं हुई और फिर 2019 के आम चुनावों के ठीक पहले उसे घोषित किया गया। 90 हजार नौकरियों के लिए डेढ़ करोड़ लोगों ने फार्म भरे। परीक्षा और परिणाम को लेकर परीक्षार्थी भर्तियों में हुई धांधली को लेकर सड़कों पर उतरने को विवश हो गए।

आरएसएस–भाजपा सरकार की रोजगार को लेकर कोई अलग से नीति नहीं है बल्कि यह देश की 'आजादी' के बाद 1947 से ही भारत के सभी शासकों की रही है। यह मॉडल साम्राज्यवाद परस्त आर्थिक नीतियों का रहा है जिसमें विकास के नाम पर निर्यात दिखाया जाता है। 1990 के दशक से अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक द्वारा निदेशित नई आर्थिक नीतियां लागू हुईं। विश्व व्यापार संगठन का बहुपक्षीय समझौता, जिस पर व्यापक जन विरोध को नजरअंदाज करते हुए भारत सरकार ने हस्ताक्षर किया था उससे भारत की अर्थव्यवस्था पर साम्राज्यवादी देशों की जकड़ और अधिक मजबूत हुई है। बाद में लगभग सभी सरकारों ने इसी दायरे में काम किया जिससे जनता की स्थिति बदतर होती गई। जनता के भारी विरोध के कारण नई आर्थिक नीतियों के पैरोकार मनमोहन सिंह की सरकार को शासक वर्गों ने ही नाकारा घोषित कर दिया और मोदी को गुजरात में मुख्यमंत्री के रूप में कारपोरेट का मजबूती से पक्ष लेने वाले नए विकल्प के तौर पर प्रस्तुत किया गया।

सरकारी क्षेत्रों में भर्ती न करने के अलावा निजी क्षेत्र में भी औद्योगिक विकास का दायरा सीमित हो गया है। 2008 से शुरू हुआ विश्व आर्थिक संकट जिससे भारत के निर्यात आधारित विकास को भारी क्षति हुई है। इसका प्रभाव निर्यात पर निर्भर औपचारिक व अनौपचारिक कपड़ा उद्योग, चमड़ा उद्योग, रत्न व आभूषण उद्योग के अंतर्गत लोगों की नौकरियों पर पड़ा है। विदेशी निवेश भारत में शेयर बाजार तक ही सीमित रहा है। उसने नए उद्योगों के निर्माण में कोई भूमिका अदा नहीं की। 'मेक इन इंडिया' की विफलता अब जगजाहिर हो चुकी है और बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपने उत्पादों से ही बाजार को पाट कर उस पर कब्जा करने में लगी हैं। आज भी देश का सबसे बड़ा रोजगार देने वाला क्षेत्र कृषि है, जहां लगभग 60 प्रतिशत आबादी किसी ना किसी रूप से उस पर निर्भर है, लेकिन उसकी खरीद की क्षमता ना बढ़ने के कारण बाजार ठहरावग्रस्त हो गया है। स्पष्ट है कि यदि गांवों में रहने वाली सबसे बड़ी आबादी और देश के साधारण जन की खरीद क्षमता बढ़ेगी तभी उत्पादन भी बढ़ेगा और उद्योगों व कारखानों में रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे। उद्योगों में अत्यधिक मुनाफे के लिए अंधाधुंध अनावश्यक उच्च स्तरीय मशीनीकरण और तकनीक ने भी बेरोजगारी का संकट पैदा किया है क्योंकि जब मशीन मशीनें बनाने लगती हैं तो निश्चित तौर पर पूंजीपति का लाभ बढ़ता है और श्रमिक बेकार होते हैं।

आरएसएस–भाजपा सरकार की जन विरोधी और कारपोरेट परस्त नीतियों के कारण रोजगार के अवसर घटे हैं। कमोबेश भाजपा व अन्य विपक्षी दलों की राज्य सरकारों के भी उसी नक्शे कदम पर चलने के कारण बेरोजगारी का संकट गहराया है। गुजरात में पाटीदारों, आंध्र प्रदेश में कापू, हरियाणा व राजस्थान में जाटों और महाराष्ट्र में मराठों के आरक्षण संबंधी आंदोलन के अलावा जल, जमीन, जंगल के सवालों को लेकर आदिवासियों, दलितों का संघर्ष भी विस्थापन व आजीविका न चल पाने के कारण बेरोजगारी के मुद्दे से जुड़ा है। इसी तरह 3 कृषि कानूनों और एमएसपी के खिलाफ किसानों का आंदोलन भी गहराते कृषि संकट के साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती गरीबी और युवाओं में बेरोजगारी से पैदा हुए असंतोष के परिणाम स्वरुप देखा जाना चाहिए। ऐसे में छात्रों और युवाओं का शिक्षा व रोजगार का अधिकार संबंधी आंदोलन समय–समय पर विभिन्न सवालों पर भड़कता तो रह सकता है, लेकिन वह किसी स्थाई समाधान तक तब तक नहीं पहुंचेगा, जब तक वह किसानों, मजदूरों, कर्मचारियों और जनता के विभिन्न तबकों के जनवादी अधिकारों के संघर्षों से एकाकार नहीं हो जाता। कारपोरेट के सहारे आरएसएस– भाजपा की सरकार फासीवाद की तरफ बढ़ रही है। इसलिए नवजनवादी क्रांति के लिए सभी तबकों का मुश्तरका संघर्ष ही समाधान की ओर ले जा सकता है। साम्राज्यवादियों तथा कारपोरेट के शोषण तथा खेती में सामंती उत्पीड़न तथा समग्र विकास तथा ग्रमीण क्षेत्रों में पिछड़ेपन को दूर करके ही बेरोजगारी को दूर किया जा सकता है और इस ओर क्रांतिकारी संघर्षों को तेज करके ही बढ़ा जा सकता है।

केन्द्रीय बजट ...

(पृष्ठ 3 का शेष)

सभी कर्जों को केंद्र सरकार द्वारा अपने ऊपर लेना तथा वोडाफोन आइडिया के सभी ऋणों को इक्विटी में परिवर्तित करना, उसके पूंजीगत व्यय का रूप है। यह आरएसएस–भाजपा सरकार के कारपोरेट आधार के विस्तार का प्रयास भी है जिसे दो कारपोरेट घरानों अंबानी व अडानी के पक्ष में देखा गया है। वित्त मंत्री ने घोषणा की है कि नीलांचल इस्पात के लिए रणनीतिक साझेदार चुना जा चुका है और यह टाटा को दिये जाने की रिपोर्ट है। एलआईसी के आईपीओ की घोषणा की गई है। इस प्रकार भारत की सबसे बड़ी बीमा कंपनी के निजीकरण की शुरुआत की जा रही है जिसमें आम लोगों का जमा पैसा कारपोरेट के नियंत्रण में लाया जा सके।

दरअसल मोदी सरकार निजीकरण की मुहिम को एक नए स्तर पर ले जा रही है। अब तक सरकार लाभ कमाने वाले उद्यमों या ऋणी उद्यमों को (ऋण के बिना) निजी हाथों में सौंप रही थी। लेकिन अब सरकार इससे भी आगे जा रही है। सरकार उद्योगों का निर्माण केवल उन्हें निजी खिलाड़ियों को सौंपने के लिए कर रही है। वित्त मंत्री ने 'सार्वजनिक निवेश के माध्यम से विकास' की घोषणा की है। इसे मोदी सरकार के बार–बार किए गए दावे के संयोजन के रुप में देखें कि सरकार का काम व्यवसाय करना नहीं है तो इस नीति की रूपरेखा स्पष्ट है। कारपोरेट को करो में छूट देना ही काफी नहीं है बल्कि सभी जोखिमों को अपने ऊपर ले लेना और उन्हें लाभ कमाने वाले हालत में निजी हाथों में सौंपना है। सात परिवहन इंजनों के साथ बुनियादी ढांचे पर वित्त मंत्री का पूरा जोर, वास्तव में पीपीपी यानी सार्वजनिक पैसा और निजी लाभ पर जोर था।

कारपोरेट की सेवा के लिए यह बेताब अभियान साम्राज्यवादी हितों की सेवा का हिस्सा है। विदेशी कारपोरेट न केवल विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण खिलाड़ी हैं। अंबानी, अडानी, मित्तल सहित प्रमुख कारपोरेट घरानों में साम्राज्यवादी बहुराष्ट्रीय कंपनियों का निवेश बढ़ रहा है जबकि पुराने घराने पहले से विदेशी कारपोरेट से गहराई से जुड़े हुए थे। यहां तक कि स्टार्टअप को जिन्हें वर्तमान सरकार द्वारा बहुत अधिक प्रचारित किया गया है भी मुख्यतः विदेशी निवेश के वाहन हैं। इन स्टार्टअप्स का आकार और जिस क्षेत्र में वे आ रहे हैं वह उनका जड़ों तथा समर्थन को दर्शाता है। इनमें से अधिकतर कर प्रोत्साहन का लाभ उठाने के लिए साम्राज्यवादी पूंजी के वाहन हैं।

यह बजट लोगों की बढ़ती समस्याओं के सामने भी विफल नीतियों का अनुसरण करता है। यह जनता की जरूरतों के विपरीत है। यह कृषि संकट को संबोधित नहीं करता और विनिर्माण में गिरावट पर बेखबर है। यह लोगों की आवश्यक जरूरतों– भोजन, आवास, स्वास्थ्य व शिक्षा को उनकी पहुंच से और दूर ले जाता है। वित्त मंत्री ने तथाकथित अमृत काल के 25 वर्षों के लिए विजन का झुनझुना लटकाया है, लेकिन यह फासीवादी ताकतों की इस जनविरोधी सरकार के लिए लोगों की चुनौती को ही बढ़ाएगा। एक चीजों उनके काम आ सकती है यानी ई–पासपोर्ट, जब उन्हें चुनौती देने के लिए जनता के संघर्ष और तेज हों। उनमें से कुछ विदेश में रहने की व्यवस्था कर रहे हैं। बहुतों के पास यह पहले से ही लंबे समय से है।

जनता पर खुलेआम हमले का विरोध लाजिमी है। जुझारु जन आंदोलनों का निर्माण और विकास जरूरी है। मौजूदा व्यवस्था के खिलाफ लोगों को उस संघर्ष में खींचने के लिए वैकल्पिक दृष्टि और नीतियों का प्रचार किया जाना चाहिए। लोगों को लामबंद करें और सभी संघर्षरत ताकतों के साथ मिलकर जन आंदोलनों का निर्माण करें।

(सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी की केंद्रीय कमेटी द्वारा 1-2-2022 को जारी)

बैटरी रिक्शा चालकों द्वारा चक्काजाम

7 फरवरी को ओखला ओद्योगिक क्षेत्र 1 व 2 के सैकड़ों बैटरी–रिकशॉ चालकों ने हरकेश नगर–ओखला फेज 2 मेट्रो स्टेशन के बाहर प्रदर्शन किया व दिन भर के लिए चक्का जाम किया। यह सभी डीएमआरसी प्रशासन द्वारा ठेके में रिक्शा चलाने का विरोध कर रहे है। DMRC द्वारा इन रिकशॉ को मेट्रो परिसर में जाने की अनुमति है परंतु पहले से चलने वाले निजी चालकों को अंदर जाने की अनुमति नहीं है, जिससे इन सैकड़ों रिक्शॉ चालकों की रोजी रोटी पर असर पड़ रहा है। पिछले 7–8 साल से निजी बैटरी–चालक इस रूट में चल रहे है। पिछले दो साल से सुरक्षा का बहाना बनाकर ठेकेदारी में रिक्शा चलाने को अनुमति दी है जो मेट्रो परिसर के अंदर से सवारी उठाती है। ये एक विशेष कंपनी के रिक्शा हैं। इसी कम्पनी के रिक्शा लेने पर ई चालक मेट्रो परिसर में जा सकते हैं। उन्हे प्रति माह एक रकम भी अदा करनी होती है। अर्थात एक कंपनी की रिक्शा, उसी को मासिक किराया, तब ही आप मेट्रो परिसर में जा सकते हैं। बाकी लोग बाहर चौक पर खड़े हो सकते हैं। जाहिर बात है कि सवारी अंदर से ही बैठ जाएगी और बाहर वाले सिर्फ प्रतीक्षा ही करते रहेंगे। आज के इस दौर में जब बेरोजगारी बेतहाशा बढ़ रही है, फैक्ट्रियों में काम नहीं है, बहुत से लोग स्व–रोजगार की ओर बढ़े हैं जिनमें रेड़ी पटरी, व बैटरी रिक्शा प्रमुख है। डीएमआरसी का यह कदम इन लोगो को बेरोजगारी व बदहाली के दलदल में धकेल देगा व एक निजी कम्पनी का मुनाफा सुनिश्चित करेगा।

इफ्टू ने इस संघर्ष का सक्रिय समर्थन किया व एकजुटता बनाने में भूमिका निभाई। सरिता विहार, अपोलो व जसोला मेट्रो स्टेशन से कई रिक्शॉ चालक, ऑटो चालक व ओखला फेज 2 के मजदूरों ने भी इस चक्का जाम का समर्थन किया व जमकर नारेबाजी की। नारेबाजी के बाद एक सभा की गई जिसका संचालन का॰ महेंद्र प्रसाद (अध्यक्ष, साउथ दिल्ली ई रिक्शा एसोसिएशन) ने किया। सभा को इफ्टू दिल्ली के अध्यक्ष का॰ अनिमेष दास व का॰ मृगांक ने संबोधित किया।

प्रदर्शन के दवाब में मेट्रो इंचार्ज हरकेश नगर –ओखला श्री दिवाकर को बाहर आ कर ज्ञापन लेना पड़ा जिसमें मांग थी कि सभी ई रिक्शा को अंदर जाने की अनुमति दी जाए। वक्ताओं ने चेतावनी दी कि अगर मांगे नही मानी जाती तो मेट्रो भवन पर धरना दिया जाएगा।

दिल्ली: महिला पर वीभत्स यौन हिंसा और सरकारी रवैया

जब देश में गणतंत्र समारोह मनाया जा रहा था उसी समय देश की राजधानी दिल्ली के शाहदरा जिला में विवेक विहार थाना क्षेत्र के कस्तूरबा नगर इलाके में एक 20 वर्षीय महिला के साथ यौन हिंसा का वीभत्स कृत्य सोशल मीडिया पर वायरल हो रहा था। सोशल मीडिया में महिलाओं के इस बर्बरतापूर्ण कृत्य को न केवल उकसाने बल्कि उस पर हंसने तालियां बजाने के वीडियो भी सामने आए। पूरा प्रकरण दिल्ली में महिलाओं की सुरक्षा के संबंध में दिल्ली पुलिस, दिल्ली सरकार, दिल्ली महिला आयोग की भूमिका पर कई प्रश्न उठाता है।

युवती और उसकी छोटी बहन ने पहले भी आरोपियों के खिलाफ पीछा करने, धमकाने की शिकायते की थी। पुलिस ने उन पर कोई ध्यान ही नही दिया। वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों की कोई जवाबदेही नही है कि उनके क्षेत्र में महिलाओं द्वारा की गई शिकायतों पर क्या कार्यवाही की गई और यदि नही तो क्यों? कोई बड़ी घटना जब तक नही घटती प्राथमिकी दर्ज ही नही की जाती। लड़कियां अपने ऊपर हिंसा की शिकायतों पर कानूनी कार्रवाई के लिए थानों के चक्कर लगाती रहती हैं। केंद्रीय गृह मंत्रालय के अधीन दिल्ली पुलिस के वरिष्ठ अधिकारियों की महिलाओं के प्रति सार्वजनिक रूप से होने वाले यौन हिंसा के संदर्भ में कोई जवाबदेही पिछले 7 सालों के राज में नहीं की गई है। निर्भया फंड के तहत रखे कोष को खर्च करने की ओर ठोस कदम नहीं उठाए गए है।सीएफएसएल लेबोरेटरी, जो की मुकदमे से संबंधित वैज्ञानिक साक्ष्य विश्लेषण और अदालत में मुकद्दमें की उचित ट्रायल के लिए आवश्यक है ,की संख्या पूरे देश में आज भी 7 ही हैं। महिला सुरक्षा पर सजा की भीषणता का हल्ला मचाने वाले सजा की सुनिश्चितता के लिए कतई गंभीर नहीं है।

इस घटना पर मुख्यमंत्री केजरीवाल ने ट्विटर पर अपना क्षोभ दर्ज किया। पिछले 7 साल से दिल्ली में आम आदमी पार्टी की सरकार है। परंतु महिलाओं की सुरक्षा के संबंध में ठोस कदम उठाने में नाकाम है। केवल एक फोरेंसिक साइंस लेबोरेटरी है। न्यायिक अधिकारी, कोर्ट स्टाफ तथा अन्य स्टाफ की नियुक्ति करने के संदर्भ में दिल्ली सरकार द्वारा बरती जा रही कोताही के चलते महिलाओं से संबंधित मामलों की सुनवाई में सालो साल लग रहे है। 2021 में आई एक रिपोर्ट के अनुसार निर्भया फंड के तहत दिल्ली को आबंटित राशि में से 25% से भी कम खर्च किया गया है। दिल्ली की तमाम मजदूर बस्तियों में क्रैच जैसी सहूलियत, जो पूरी तरह से दिल्ली सरकार की जिम्मेदारी है, नहीं उपलब्ध करवाई गई है। नतीजा है कि असंगठित क्षेत्र में कार्यरत विशाल महिला श्रम शक्ति अपनी छोटी बच्चियों को पास पड़ोस के रहम पर छोड़कर नौकरियों के लिए जाती हैं । जब जब इन बच्चियों के साथ यौन हिंसा के मामले सामने आते हैं तो दिल्ली सरकार और दिल्ली महिला आयोग भी कुछ आंसू बहा देते हैं और कड़ी सजा की बात करते है। अभी हाल ही में दिल्ली में ही एक 8 वर्षीय बच्ची के साथ 11 और 12 साल के किशोर आरोपियों के मामले में यही दोहराया गया। दिल्ली महिला आयोग की अध्यक्ष स्वाति मालीवाल भी दिल्ली सरकार को यह बताने और स्वयं भी यह समझने की इच्छुक नहीं रही कि दिल्ली में श्रम कानूनों को लागू नहीं किए जाने, ठेका और दिहाड़ी मजदूरी दिल्ली सरकार के विभागों सहित बड़े पैमाने पर व्याप्त होने, सभी को राशन उपलब्ध न करवाए जाने, सभ्य, सस्ते आवास के लिए कोई योजना न होने के कारण दिल्ली वासियों को इंसान की तरह जीने में कितने कष्ट हो रहे हैं। दिल्ली के किशोर और युवा नशाखोरी का शिकार हो रहें हैं पर दिल्ली सरकार निशुल्क नशा मुक्ति केंद्रों की संख्या बढ़ाने में नाकाम है। दिल्ली सरकार की नई आबकारी नीति ने समस्या को और गहरा दिया है।

दिल्ली सरकार और दिल्ली महिला आयोग, "पुलिस हमारे अधीन नहीं " यह कहकर अपना पल्ला झाड़ लेती हैं परंतु इस पर ठोस सवाल नहीं उठाते जो बता सके कि दिल्ली के थानों में महिलाओं द्वारा दर्ज की गई कितनी शिकायतों पर एफआईआर दर्ज हुई या फिर कुछ और कार्यवाही की गई। अधिकांश बार दिल्ली महिला आयोग दिल्ली सरकार का भोंपू बनकर काम करने में ही रुचि दिखाता है।

यह घटनाक्रम यह भी साबित करता है कि पितृसत्ता की सोच महिलाओं को भी प्रभावित करती हैं जैसे यह पुरुषों को पंभावित करती है क्योंकि प्रश्न लैंगिक चेतना का है।

पहले से ही मौजूद सामंती संस्कृति जिसके तहत महिला एक उपभोग की वस्तु है और उसका स्थान चारदीवारी के अंदर है के साथ जब कॉरपोरेट परस्त पतनशील संस्कृति मिलती हैं तो महिलाओं पर और जनमानस की सोच में यही बैठ जाता है कि महिला तो बस एक वस्तु ही है। शिक्षा के व्यवसाईकरण, नौकरियों और अवसरों की असुरक्षा, अवैतनिक काम इत्यादि से महिलाओं को सामाजिक उत्पादन में भाग लेने के अवसर और कम हो जाते हैं। पितृसत्तात्मक सोच के दायरे से महिलाओं को बाहर निकालना और अधिक चुनौतीपूर्ण हो जाता है।

कस्तूरबा नगर घटना के विरोध में दिल्ली में 29 जनवरी को दिल्ली के महिला संगठनों का एक संयुक्त रोष प्रदर्शन दिल्ली पुलिस मुख्यालय पर किया गया जिसमें प्रगतिशील महिला संगठन सहित अनेक संगठनों ने भाग लिया। प्रगतिशील महिला संगठन, एडवा, एनएफआईडब्लू, सीएसडब्ल्यू, स्वास्तिक महिला संगठन, अखिल भारतीय संस्कृतिक महिला संगठन की ओर से गृहमंत्री भारत सरकार को पत्र लिखकर मांग की गई कि विवेक विहार थाना क्षेत्र में घटित इस बर्बर घटना में पुलिस के द्वारा विभिन्न स्तरों पर बरती गई लापरवाही के लिए दिल्ली पुलिस के निचले और उच्च अधिकारियों पर अविलंब उदाहरणमूलक कार्यवाही की जाए ताकि पुलिस की जवाबदेही सुनिश्चित हो ।

महिला संगठनों को एकताबद्ध जुझारूं संघर्षों के द्वारा ही महिलाओं की सुरक्षा के संदर्भ में ठोस कदमों की सुनिश्चितता लाई जा सकती हैं।

72वें गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या का दृश्य : रोजगार चाहने वालों की पिटाई

आरआरबी संशोधित परिणाम घोषित करो ! एनडीए सरकारों, आक्रोशित छात्रों और युवाओं पर पुलिस दमन बंद करो!

'मोदी सरकार = बढ़ती बेरोजगारी' !

भारत के छात्र और युवा, विरोध में बाहर निकलो!

पटना, मुजफ्फरपुर, छपरा, बक्सर, नवादा, फतुहा, बिहार शरीफ, सीतामढ़ी और बिहार के अन्य जिलों और उत्तर प्रदेश के प्रयागराज में हजारों युवा रेलवे भर्ती बोर्ड द्वारा घोषित और ग्रुप डी भर्ती के लिए घोषित दूसरी परीक्षा– एनटीपीसी (गैर तकनीकी व आम पसंद की श्रेणी वाले) प्रतियोगी परीक्षा 2021 के गलत परिणामों के विरोध में सड़कों पर उतर आए हैं।

1.25 करोड़ उम्मीदवार लेवल 2 से लेवल 6 तक की नौकरियों के लिए 35,000 रिक्तियों के लिए परीक्षा में शामिल हुए जिन्हें 19,900 से 35,000 प्रति माह के बीच वेतन मिलना था। नौकरियों के लिए न्यूनतम योग्यताएं भी अलग–अलग हैं और उम्मीदवार परेशान हैं कि उच्च योग्यता वाले प्रत्याशियों पर कम योग्यता की आवश्यकता वाली नौकरियों के लिए विचार किया जा रहा है।

2019 में सरकार ने भर्तियों की घोषणा की थी। 2021 में प्री परीक्षा आयोजित हुई व साथ में बाद में घोषणा हुई कि अब परीक्षा दो स्तर पर होगी व मैंस परीक्षा भी होगी। 15 जनवरी को परिणाम आया व लाखों छात्रों ने स्वयं को मैंस से बाहर पाया। भर्ती रोकने के लिये प्रक्रिया लंबी की जा रही है।

यह सभी सरकारी भर्तियों में आम बात है– पहले रिक्तियां ही नहीं निकालते, निकालने पर कम से कम रु० 500 प्रति फॉर्म लिया जाता है व पूरी प्रक्रिया को लम्बा खींच कर अंततः घूसखोरी ही चयन को तय करती है।

देश में बड़े पैमाने पर बेरोजगारी और अल्परोजगारी नोटबंदी और मोदी सरकार द्वारा घोषित अमानवीय जनविरोधी लॉकडाउन से और अधिक बढ़ गई है। अब भर्ती परीक्षाओं में विसंगतियों का विरोध करने वाले युवाओं और छात्रों की कोई सुनवाई नहीं हो रही है, बल्कि बिहार और उत्तर प्रदेश में एनडीए सरकारों ने उनके खिलाफ पुलिस द्वारा लाठीचार्ज किया है। प्रयागराज में होस्टलों में घुसकर पुलिस ने छात्रों की बहुत बेरहमी से पिटाई की। केंद्र सरकार के रेल विभाग ने इन युवाओं को बड़ी धमकियां दी हैं कि वीडियो व फोटो से उनकी पहचान कर ली जाएगी, पुलिस केस दर्ज कर उन्हें रेलवे में भरती से आजीवन प्रतिबंधित कर दिया जाएगा !!

यह भी दीगर है कि यह घटना गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर हुई है जो इस गणतंत्र के खोखलेपन को उजागर करता है कि आखिर ये गण कौन हैं?

नौजवान भारत सभा तथा पी.डी.एस.यू. पुलिस हिंसा की कड़ी निंदा करती हैं।

– हम मांग करते हैं कि आरआरबी के परिणामों में तत्काल संशोधन किया जाए तथा सही परिणाम अविलम्ब घोषित किये जाएं।

– सभी हिरासत में लिये लोगों को फौरन रिहा करो!

– लाठीचार्ज का आदेश देने वाले सभी पुलिस अधिकारियों को निलंबित करो !

– गलत परिणाम घोषित करने के लिए आरआरबी अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई की जाए।

– सभी के लिए नौकरियों तथा नौकरी की सुरक्षा के लिए संघर्ष को मजबूत करो !

हम सभी छात्र और युवा संगठनों, विशेष रूप से पीडीएसयू, पीएसयू, एनबीएस और पीवाईएल इकाइयों से युवाओं और छात्रों के इस संघर्ष का समर्थन करने व एकजुटता कार्रवाई का आयोजन करने की अपील करते हैं!

(धीरज, नौजवान भारत सभा दिल्ली तथा राजीव, पीडीएसयू दिल्ली द्वारा 26 जनवरी 2022 को जारी)

If Undelivered, Please Return to

Pratirodh Ka Swar

Monthly

Balmukand Khand, Girinagar, New Delhi-110019

Hindi Organ of CPI(ML)-New Democracy

R. N. 47287/87

Book Post

To

_____

_____

_____

_____

_____

_____

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी यतेन्द्र कुमार द्वारा स्टार ऑफसेट, टी-2151/8-ए-2, न्यू पटेल नगर, नई दिल्ली-110008 से मुद्रित व बालमुकन्द खण्ड, गिरी नगर, नई दिल्ली-110019 से प्रकाशित। सम्पादक : यतेन्द्र कुमार